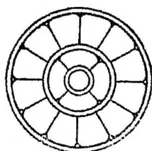
अदिति ग्रन्थमाला
पन्द्रहवां पुष्प

श्री माताजी

सुन्दर कहानियां



श्रीअरविन्द आश्रम, पांडीचेरी

सम्पादक

डा० इन्द्रसेन

अनुवादिका

श्री लीलावती

(Belles Histoires का मूल फ्रेंच से अनुवाद)

श्रीअरविंद आश्रम प्रेस,

पांडीचेरी

कहानियां

हिन्दी-पाठकों के लिये
श्री माताजी के आशीर्वादरूप
दो शब्द

Ces histoires ont été écrites pour aider les enfants à se trouver eux-mêmes et à suivre un chemin de rectitude et de beauté

évrier 1950.

(हिंदी अनुवाद)

ये कहानियां इसलिये लिखी गई थीं कि इनको पढकर बच्चे अपने आपको जानना तथा सत्य और सौन्दर्य के मार्ग का अनुसरण करना सीखें।

—श्री माताजी

सुन्दर कहानियां

१

आत्म-संयम

हम एक जंगली घोड़े को तो वश में कर सकते हैं, परंतु एक बाघ के मुंह में लगाम नहीं लगा सकते।

यह क्यों ? क्योंकि बाघ के स्वभाव के अंदर एक ऐसी क्रूरता होती है जो किसी प्रकार सुधारी नहीं जा सकती। इसी कारण हम उससे किसी भी अच्छे व्यवहार की आशा नहीं करते और उसे मार डालने के लिये विवश हो जाते हैं जिससे वह हमें कोई हानि न पहुंचा सके।

इसके विपरीत, एक जंगली घोड़े को, प्रारंभ में वह चाहे कितना ही उद्दंड और अड़ियल क्यों न हो, थोड़े से यत्न और धैर्य द्वारा वश में किया जा सकता है। कुछ समय बाद वह हमारी आज्ञा का पालन करना तथा हमसे प्रेम करना भी सीख जाता है। और अंत में तो वह लगाम चढ़वाते वक्त अपना मुंह ही आगे बढ़ा देता है।

मनुष्यों में भी कुछ विद्रोही और उद्दंड प्रवृत्तियां तथा इच्छाएं होती हैं, पर ऐसा कभी शायद ही होता हो कि वे बाघ की भांति वश में न

लाई जा सकें। अधिकांश में तो ये जंगली घोड़े के सदृश होती हैं और उनके सुधार के लिये आवश्यकता होती है केवल एक लगाम की। और सबसे बढ़िया लगाम वह है जो मनुष्य स्वयं अपनी प्रवृत्तियों पर लगाता है। इसे ही हम आत्म-संयम कहते हैं।

*

हुसैन पैगम्बर मोहम्मद के नाती थे। उनके रहने का मकान खूब आलीशान था, थैलियां अशर्फियों से भरी थीं। उनको नाराज करना एक धनी मनुष्य को नाराज करना था। और धनी का क्रोध बहुत भयंकर होता है।

एक दिन की बात है एक गुलाम खौलते हुए पानी का बर्तन लिये हुसैन के पास से गुजरा। वे उस समय भोजन कर रहे थे। दुर्भाग्य-वश थोड़ा सा पानी उछलकर पैगम्बर के नाती के ऊपर गिर पड़ा। वे क्रोध से चिल्ला उठे।

गुलाम घुटने टेककर बैठ गया। उसका मन उस समय इतना स्वस्थ और संयत था कि मौके पर उसे कुरान की एक आयत स्मरण हो आई।

"स्वर्ग उन लोगों के लिये है जो अपने क्रोध को वश में रखते हैं", उसने कहा।

"मैं क्रोधित नहीं हूं", हुसैन जो इन शब्दों का अर्थ भलीभांति समझते थे बीच में ही बोल उठे।

"और उन लोगों के लिये है जो मनुष्यों को क्षमा करते हैं", गुलाम बोलता गया।

"मैं तुझे क्षमा करता हूं", हुसैन बोले।

"क्योंकि भगवान् दयालु व्यक्तियों को प्यार करते हैं", दास ने अंत में कहा।

इस बातचीत के समाप्त होते न होते हुसैन का सारा गुस्सा काफूर हो गया। उन्होंने अनुभव किया कि उनका हृदय अत्यंत कोमल हो उठा है। गुलाम को उठाते हुए उन्होंने उससे कहा–"ले, ये चार सौ दिरहम ले, तू आज से स्वतंत्र है।"

इस प्रकार हुसैन ने अपने उतावले मन पर–जो बेशक उदार भी था–लगाम लगानी सीखी ! उनका स्वभाव जो न तो बुरा था और न ही कठोर इस योग्य था कि वश में किया जा सके।

*

इसलिये, बालको, यदि तुम्हारे माता पिता या तुम्हारे अध्यापक कभी तुम्हें अपने स्वभाव को वश में करने के लिये कहते हैं तो इसलिये नहीं कि उनके विचार में तुम्हारे छोटे बड़े दोष किसी भी तरह सुधारे नहीं जा सकते, बल्कि इसलिये कि तुम्हारा वेगी और उतावला मन उस अच्छी नसल के बछेड़े के समान है जिसको लगाम की जरूरत है।

एक दरिद्र झोंपड़ी और एक राजमहल में से तुम अपने रहने के लिये किसे पसंद करोगे ? निःसंदेह महल को।

एक कहानी है कि जब हजरत मोहम्मद स्वर्ग देखने के लिये गये तो वहां उन्होंने कुछ ऊंचाई पर बने हुए कई बड़े बड़े महल देखे। उनकी सुन्दरता के सामने सारे देश की सुन्दरता फीकी पड़ रही थी !

"ऐ जिब्राइल", मोहम्मद ने उस देवदूत से जो उनको स्वर्ग दिखा

रहा था पूछा, "ये महल किन लोगों के लिये बनाये गये हैं ?"

देवदूत ने उत्तर दिया–"उन लोगों के लिये जो अपने क्रोध को वश में रखते हैं और अपने को हानि पहुंचानेवालों को भी क्षमा करना जानते हैं।"

सत्य ही, शांत और द्वेषरहित मन एक वास्तविक महल के समान है। पर यह बात एक आवेशयुक्त और प्रतिहिंसा से परिपूर्ण मन के बारे में नहीं कही जा सकती। हमारा मन हमारा घर है। इसको हम अपनी इच्छानुसार स्वच्छ, शांत और मधुर बना सकते हैं–ऐसा घर जो सुरीले और तालमय स्वरों से भरा है। पर यदि हम चाहें तो इसको दुःखप्रद शब्दों और बेसुरी चिल्लाहटों से भरी हुई एक भयावह और अंधेरी गुफा भी बना सकते हैं।

*

उत्तर फ्रांस के एक शहर में रहनेवाले एक लड़के से मेरा परिचय था। वह लड़का था तो मन का बड़ा सरल पर उसका हृदय बड़ा जोशीला था। क्रोध में आने के लिये वह मानों सदैव तैयार बैठा रहता था।

एक दिन मैंने उससे कहा–"जरा सोचकर बताओ तो, तुम्हारे जैसे हृष्ट-पुष्ट लड़के के लिये कौनसी बात अधिक कठिन है–थप्पड़ के बदले थप्पड़ लगाना, मारनेवाले साथी के मुंह पर घूंसा जमा देना या ठीक उसी समय अपनी मुट्ठी को जेब में डाल लेना ?"

"अपनी मुट्ठी को जेब में डाल लेना", उसने उत्तर दिया।

"अच्छा, तो अब यह बताओ कि तुम्हारे जैसे साहसी लड़के के लिये

सबसे आसान काम करना उचित है या, उसके विपरीत, सबसे कठिन काम ?"

एक मिनट सोचकर कुछ हिचकिचाते हुए उसने उत्तर दिया-"सबसे कठिन काम।"

"बहुत ठीक, अब अगली बार जब ऐसा अवसर आये तो यही करने का यत्न करना।"

उसके कुछ दिन बाद वह युवक एक दिन मेरे पास आया और उसने मुझे समुचित गर्व के साथ बताया कि वह "सबसे कठिन कार्य" करने में सफल हुआ है।

उसने कहा, "कारखाने में मेरे साथ काम करनेवाले मेरे एक साथी ने जो अपने बुरे स्वभाव के लिये प्रसिद्ध है क्रोध में आकर मुझे मार दिया। क्योंकि वह जानता था कि मैं साधारणतया क्षमा नहीं किया करता और मेरे बाहुओं में बल भी है, वह अपनी रक्षा करने के लिये तैयार हो गया। ठीक उसी समय मुझे जो बात आपने सिखाई थी वह स्मरण हो आई। वैसा करना जितना मैंने सोचा था उससे कहीं अधिक कठिन लगा, पर मैंने अपनी मुट्ठी जेब में डाल ही ली। जैसे ही मैंने ऐसा किया मेरा गुस्सा न जाने कहां गायब हो गया। उसका स्थान मेरे उस साथी के प्रति दया ने ले लिया। तब मैंने उसकी ओर अपना हाथ बढ़ा दिया। इससे उसको इतना आश्चर्य हुआ कि एक क्षण तो वह मुंह बाये मेरी ओर ताकता रहा, एक शब्द भी न बोल सका; फिर वह शीघ्रता से मेरे हाथ की ओर लपका, उसको जोर से दबाया और एकदम पिघलकर बोला, 'आजसे तुम जो चाहो मुझसे करा सकते हो।

मैं सदा के लिये तुम्हारा मित्र बन गया हूं'।"

उस लड़के ने अपने क्रोध को उसी तरह वश में कर लिया था जैसे कि खलीफा हुसैन ने किया था।

परंतु इसके अतिरिक्त कई और भी चीजें हैं जिनको वश में करने की जरूरत है।

*

अरब देश के कवि अल-कोजई रेगिस्तान में रहा करते थे। एक दिन उन्हें नाबा का एक सुन्दर पेड़ दिखाई पड़ा। उन्होंने उसकी टहनियों से एक धनुष और कई तीर बनाये।

रात के समय वे जंगली गदहों का शिकार करने के लिये निकले। शीघ्र ही उन्हें गदहों के एक झुंड की पदचाप सुनाई पड़ी। उन्होंने एक तीर छोड़ा। पर उन्होंने धनुष की डोरी इतने जोर से खींची थी कि तीर झुंड के एक जानवर के शरीर को भेदता हुआ पास की एक चट्टान से जा टकराया। चट्टान से तीर के टकराने की आवाज सुनकर अल-कोजई ने सोचा कि उनका वार निष्फल गया है। अब उन्होंने दूसरा तीर छोड़ा, और इस बार भी वह एक जानवर के शरीर में से पार होता हुआ चट्टान के जा लगा। अल-कोजई ने अब भी यही समझा कि निशाना चूक गया। उन्होंने इसी तरह तीसरा, चौथा, पांचवां तीर चलाया और प्रत्येक बार उन्होंने वही आवाज सुनी। अब तो क्रोध में आकर उन्होंने अपना धनुष ही तोड़ डाला।

अगले दिन सबेरा होने पर उन्होंने पांचों गदहों को चट्टान के पास मरा हुआ पाया।

यदि उनमें कुछ अधिक धैर्य होता, यदि उन्होंने दिन निकलने तक की प्रतीक्षा की होती तो अपनी शांति के साथ वे अपने धनुष को भी बचा लेते।

*

पर इससे किसी को यह नहीं समझना चाहिये कि हम ऐसी शिक्षा को, जो मनुष्य-चरित्र के सारे उत्साह और बल को दूर कर उसे दुर्बल बना देनेवाली है, उचित समझते हैं। यदि हम किसी जंगली घोड़े के लगाम लगाते हैं तो इसलिये नहीं कि वह उसके मुंह को काट दे या उसके दांत ही तोड़ दे। और यदि हम चाहें कि वह अपना कार्य अच्छी तरह पूरा करे तो हमें उसे लगाम इसलिये लगानी चाहिये कि हम उसे चला सकें, न कि इसलिये कि हम लगाम को इतनी निर्दयता से खींचें कि वह आगे ही न बढ़ सके।

यह सचमुच दुर्भाग्य की बात है कि बहुत से दुर्बलचरित्र अधिकांश में भेड़ के स्वभाव से मिलते हैं। उनको चलाने के लिये बस मामूली सा कहना ही काफी होता है।

कुछ गुलाम के स्वभाव जैसे होते हैं—जड़, निःशक्त और बेहद दब्बू।

आबू उस्मान अल-हिरी अपने अत्यधिक धैर्य के लिये प्रसिद्ध था। एक दिन वह एक उत्सव में सम्मिलित होने के लिये निमंत्रित किया गया। जब वह अपने निमंत्रक के घर पहुंचा तो उसने उससे कहा, "मुझे आज क्षमा कीजिये, आज मैं आपका स्वागत नहीं कर सकता। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप घर लौट जायं। भगवान् की दया आप-पर बनी रहे।"

आबू उस्मान अपने घर लौट गया। उसके घर पहुंचते ही उसका मित्र उसे फिर से निमंत्रित करने के लिये आ पहुंचा।

आबू उस्मान अपने मित्र के पीछे पीछे चल पड़ा। दरवाजे पर पहुंचकर उसके मित्र ने उससे फिर उस दिन के लिये क्षमा मांगी। आबू उस्मान बिना ननुनच किये फिर वापिस आ गया।

तीसरी बार और चौथी बार भी वही मामला दुहराया गया। परंतु अंत में उसके मित्र ने उसका स्वागत किया और सब लोगों की उपस्थिति में उससे कहा, "मैंने आपके साथ ऐसा बर्ताव इसलिये किया था कि आपके स्वभाव की परीक्षा हो जाय। मैं आपके धैर्य और नम्रता की प्रशंसा करता हूं।"

"मेरी प्रशंसा न करिये", आबू उस्मान ने उत्तर दिया, "क्योंकि यह गुण तो कुत्तों में भी होता है; जब उन्हें बुलाया जाय तो वे चले आते हैं और जब दुतकार दिया जाय तो लौट जाते हैं।"

आबू उस्मान मनुष्य था, कुत्ता नहीं था; और जो उसने न्याय और आत्मसम्मान का जरा भी ख्याल न कर अपनी प्रसन्नता की अवहेलना की और मित्रों की हंसी का कारण बना, इससे किसी को कोई लाभ नहीं पहुंचा।

तो क्या ऐसे नम्र स्वभाववाले मनुष्य के अंदर वश में लाई जानेवाली कोई चीज नहीं थी ? हां, थी। वह ऐसी चीज थी जिसे वश में लाना सबसे अधिक कठिन है। वह थी उसके स्वभाव की दुर्बलता। और वह इसलिये थी कि वह स्वयं अपने ऊपर शासन करना जानता नहीं था। अतएव, प्रत्येक उसको अपनी इच्छा के अनुसार

चलाता था।

*

एक नवयुवक ब्रह्मचारी बड़ा चतुर था और वह स्वयं अपने इस गुण को जानता था। उसकी बड़ी इच्छा थी कि वह अपनी योग्यताओं को अधिक से अधिक बढ़ाये जिससे सर्वत्र उसकी प्रशंसा हो। इसके लिये उसने एक के बाद एक कई देशों की यात्रा की।

एक तीर बनानेवाले के यहां उसने तीर बनाना सीखा।

कुछ दूर आगे जाकर उसने नाव बनाना तथा उसे खेना सीखा।

एक जगह उसने गृह-निर्माण की कला सीखी।

फिर एक और जगह उसने कई और कलाएं सीखीं।

इस प्रकार वह सोलह देशों का पर्यटन कर वापिस घर लौटा और बड़े गर्व के साथ कहने लगा, "इस पृथ्वी पर मेरे समान चतुर और दूसरा मनुष्य कौन है?"

एक दिन भगवान् बुद्ध ने उस ब्रह्मचारी को देखा और उन्होंने सोचा कि इसको उस कला की शिक्षा देनी चाहिये जो उन सबसे, जो उसने अब तक सीखी हैं, अधिक महान् हो। वे एक बूढ़े श्रमण का रूप धारण करके उस नवयुवक के पास गये। उनके हाथ में एक भिक्षापात्र था।

"तुम कौन हो?" ब्रह्मचारी ने प्रश्न किया।

"मैं अपने शरीर को वश में रख सकनेवाला एक मनुष्य हूं।"

"तुम क्या कहना चाहते हो?"

"एक धनुर्वेदी तीर चलाना जानता है", बुद्ध ने उत्तर दिया, "एक नाविक नाव खेता है; एक शिल्पी अपनी देख-रेख में मकान बनवाता

है; पर एक ज्ञानी स्वयं अपने ऊपर शासन करता है।"

"सो किस तरह?"

"यदि कोई उसकी प्रशंसा करे तो उसका मन चंचल नहीं होता; यदि कोई उसकी निंदा करे तो भी उसका मन स्थिर रहता है; वह सर्वहित के महानियम के अनुसार कर्म करता है और इस प्रकार वह सदा शांति में निवास करता है।"

अच्छे बच्चो! तुम भी अपने ऊपर शासन करना सीखो। और अगर अपने स्वभाव को वश में करने के लिये तुम्हें कठोर लगाम भी लगाने की आवश्यकता पड़े तो शिकायत मत करो।

एक चंचल युवा घोड़ा जो धीरे धीरे संयत हो जायगा उस मूक काठ के घोड़े से कहीं अच्छा है जो जैसा उसको बना दिया गया है सदा वैसा ही रहता है और जिसपर केवल हंसी-खेल के लिये ही लगाम चढ़ाई जाती है।



२

साहस

तुम पानी में गिर पड़ते हो। वह विपुल जलराशि तुम्हें भयभीत नहीं करती। तुम हाथ पांव मारते हो, साथ ही तैरना सिखानेवाले अपने गुरु को धन्यवाद देते हो। तुम लहरों पर काबू पा लेते हो और बच निकलते हो। तुम बहादुर हो।

तुम सो रहे थे। 'आग' 'आग' की आवाज ने तुम्हें चौंका दिया। तुम बिस्तर पर से कूद पड़ते हो; सामने अग्नि की लाल लपटें दिखाई देती हैं। तुम उस घातक भय से त्रस्त नहीं होते। धुएं, चिनगारियों और लपटों के बीच में से होकर तुम भाग निकलते हो और अपने आपको बचा लेते हो। यह साहस का काम है।

बहुत दिन हुए मैं इंग्लैंड के एक बच्चों के स्कूल में गई थी। वहां तीन से सात वर्ष तक के छात्र थे। उनमें लड़के लड़कियां दोनों थे। वे सब बुनने, चित्रकारी करने, कहानी सुनने सुनाने, गाने आदि में लगे हुए थे।

उनके अध्यापक ने मुझसे कहा—"हम अब अग्नि से बचने का अभ्यास करेंगे। आग सचमुच में नहीं लगी है। पर बच्चों को यह सिखाना है कि किस प्रकार खतरे का संकेत पाते ही झटपट उठकर भाग जाना चाहिये।"

उसने सीटी दी। उसी दम बच्चों ने अपनी पुस्तकें, पेन्सिलें और बुनने की सलाइयां छोड़ दीं और उठकर खड़े हो गये। दूसरे संकेत पर सब, एक के पीछे एक, बाहर खुले में आ गये। कुछ ही क्षणों में श्रेणी खाली हो गई। उन छोटे बच्चों ने आग के खतरे का सामना करना और साहसी बनना सीखा था।

तुम किसकी रक्षा के लिये तैरे थे? अपनी रक्षा के लिये।

तुम किसको बचाने के लिये आग की लपटों में से गुजरे थे? अपने आपको बचाने के लिये।

बच्चों ने किसके बचाव के लिये आग के भय का सामना किया था? अपने बचाव के लिये।

प्रत्येक अवस्था में साहस का प्रदर्शन अपनी रक्षा के लिये किया गया था। क्या यह अनुचित था? बिल्कुल नहीं। अपने जीवन की रक्षा करनी और उसे बचाने के लिये वीरता होनी सर्वथा उचित ह। पर एक वीरता इससे भी बड़ी है—वह वीरता जो दूसरों की रक्षा के लिये काम में लाई जाती है।

*

मैं तुम्हें माधव की वह कहानी सुनाती हूं जो भवभूति ने लिखी थी।

माधव मंदिर के बाहर घुटने टेके बैठा था कि उसने एक दुःखभरी आवाज सुनी।

अंदर घुसने के लिये उसने रास्ता पा लिया और देवी चामुंडा के कक्ष में उसने झांका।

उस भयानक देवी पर बलि चढ़ाने के लिये एक लड़की को वहां

तैयार रखा हुआ था। वह बेचारी मालती थी। वह युवती सुप्त अवस्था में ही वहां लाई गई थी। वहां पुजारी और पुजारिन के पास वह बिल्कुल अकेली थी। पुजारी ने अपना चाकू जिस समय ऊपर उठाया उस समय वह अपने प्रेमी माधव का ध्यान कर रही थी–"माधव, मेरे हृदयेश्वर, मेरी यह प्रार्थना है कि अपनी मृत्यु के बाद भी मैं तुम्हारी याद में रह सकूं। जिनको प्रेम अपनी लंबी और मधुर याद में सुरक्षित रखता है, उनकी मृत्यु नहीं होती।"

एक चीख के साथ वीर माधव उस बलि-गृह में कूद पड़ा। पुजारी के साथ उसका घोर युद्ध हुआ। मालती बचा ली गई।

माधव ने इस साहस का प्रयोग किसके लिये किया था? क्या वह अपने लिये लड़ा था? हां, पर उसके साहस का केवल यही कारण नहीं था। उसने दूसरे की रक्षा के लिये भी लड़ाई की थी। उसने एक दुःखी की आर्त्त ध्वनि सुनी थी जिसने उसके वीर-हृदय को सीधा जा छुआ था।

*

यदि तुम जरा सोचो तो तुम्हें कितनी ही इसी प्रकार की आंखों देखी घटनाएं याद आ जायंगी। तुमने निश्चय ही देखा होगा किस प्रकार एक व्यक्ति भय का संकेत पाते ही किसी दूसरे पुरुष, स्त्री या बच्चे की सहायता के लिये दौड़ पड़ता है।

तुमने समाचारपत्रों या कहानियों में भी इस प्रकार की साहसपूर्ण घटनाओं के बारे में अवश्य पढ़ा होगा। तुमने यह भी सुना होगा किस प्रकार आग बुझानेवाले आग की लपटों में ग्रस्त घरों से लोगों को बचाते

हैं; किस प्रकार खान में काम करनेवाले गहरे कुएं में उतरकर अपने साथियों को पानी, आग और दम घोंटनेवाली गैस से बचाने के लिये बाहर निकाल लाते हैं; भूचाल से हिलते घरों में से लोग घर की दीवारों के गिरने का डर होते हुए भी दुर्बल व्यक्तियों को बाहर लाने का साहस करते हैं, नहीं तो वे मलवे के नीचे दबकर मर गये होते; किस प्रकार नागरिक अपने नगर या मातृभूमि को बचाने के लिये शत्रुओं का सामना करते, भूख प्यास सहते और घायल तक हो जाते हैं।

इस प्रकार हमने दो प्रकार के साहस देखे हैं--एक अपनी सहायता के लिये काम में लाया जाता है दूसरा औरों की सहायता के लिये।

*

मैं तुम्हें वीर विभीषण की कहानी सुनाती हूं। उसने एक ऐसे खतरे का सामना किया था जो मृत्यु के खतरे से भी अधिक भयानक था। वह एक राजा के क्रोध के सामने डट गया था और उसने उसे बुद्धिमानी की एक ऐसी सलाह दी जिसे देने का किसी और को साहस नहीं हुआ था।

लंका का राक्षस राजा दश शीशवाला रावण कहलाता था। वह श्री सीताजी को अपने रथ में बैठा, उनके पति से दूर, लंका-द्वीप में स्थित अपने महल में ले गया था। जिस महल और जिस बाग में राजकुमारी सीता को बंद कर दिया गया था वे बड़े विशाल और मोहक थे, फिर भी वे दुःखी थीं; दिन रात रोती थीं। उन्हें यह भी पता नहीं था कि वे अपने स्वामी राम को पुनः देख सकेंगी या नहीं।

यशस्वी राम को वानर-राज हनुमान् से यह पता चल गया कि उनकी स्त्री किस स्थान पर कैद करके रखी गई है। वे अपने सुशील भाई

लक्ष्मण और वीरों की एक बड़ी सेना लेकर बंदिनी सीता की सहायता के लिये चले।

जब राक्षस-राज रावण को राम के आने का पता चला तो वह डर के मारे कांपने लगा।

अब उसे दो प्रकार की सलाह मिली। उसके राज-दरबारियों का एक झुंड उसके सिंहासन के चारों ओर इकट्ठा हो गया और कहने लगा—"सब ठीक है महाराज! डर की कोई बात नहीं है। आपने देवताओं और असुरों दोनों को जीत लिया है; राम और उसके साथी हनुमान् के बंदरों को जीतने में कोई कठिनाई नहीं होगी।"

ज्यों ही ये गुलगपाड़िये राजा के पास से हटे, उसके भाई विभीषण ने वहां प्रवेश किया और उसके आगे घुटने टेककर उसके पैर चूमे। फिर उठकर वह सिंहासन की दाईं ओर बैठ गया और बोला—"मेरे भाई, यदि तुम सुख से रहना चाहते हो या लंका के सुन्दर द्वीप के सिंहासन की रक्षा करना चाहते हो तो सुन्दरी सीता को वापिस कर दो, क्योंकि वह दूसरे की स्त्री है। राम के पास जाओ और उनसे क्षमा मांगो। वे तुम्हें निराश नहीं करेंगे। इतने दुःसाहसी और अभिमानी मत बनो।"

एक और बुद्धिमान् व्यक्ति मलयावन ने यह बात सुनी और वह इससे संतुष्ट हुआ। उसने राक्षस-राज से आग्रहपूर्वक कहा—"अपने भाई की बात पर विचार करो, क्योंकि इसने सत्य कहा है।"

"तुम दोनों दुष्टाशयवाले हो", राजा ने उत्तर दिया, "कारण, तुम मेरे शत्रुओं का पक्ष लेते हो।"

उन दस सिरों की आंखों से ऐसे क्रोध की चिनगारियां निकलने

लगीं कि मलयावन तो डर के मारे कमरे से भाग गया। पर विभीषण अपने आत्म-बल से वहीं डटा रहा, बोला–"स्वामी, प्रत्येक मनुष्य के हृदय में विवेक और अविवेक दोनों का निवास है। जिसके हृदय में विवेक होता है उसके लिये जीवन सुखकारक है; यदि वहां अविवेक का राज्य हो तो फिर बस दुःख ही दुःख है। भाई, मुझे डर है कि तुम्हारे हृदय में अविवेक अड्डा जमाये हुए है क्योंकि जो तुम्हें बुरा परामर्श देते हैं तुम उन्हीं की बात पर कान धरते हो। वे तुम्हारे सच्चे मित्र नहीं हैं।"

इतना कह वह चुप हो गया और उसने राजा के पांव फिर चूमे।

रावण चिल्लाया–"दुष्ट! तू भी मेरे शत्रुओं में से है! बस, ऐसे मूर्खता के शब्द और मत बोल। ऐसे शब्द तू उन साधु-संन्यासियों को जाकर सुना जो जंगलों में रहते हैं, उससे मत कह जिसने जिन जिन शत्रुओं से युद्ध किया है उन सबपर विजय प्राप्त की है"–ऐसा कहते कहते उसने अपने वीर भाई विभीषण के एक लात जमा दी।

मन में व्यथित हो विभीषण उठ बैठा और राजा का घर छोड़कर चला गया।

जरा भी मन में भय न मानते हुए उसने सब कुछ रावण से साफ साफ कह दिया था और अब क्योंकि उस दश शिरवाले ने उसकी बात न सुननी चाही तो वह चले जाने के सिवाय और कर भी क्या सकता था।

विभीषण का यह कार्य शारीरिक साहस का कार्य था क्योंकि उसने अपने भाई की ठोकरों का डर नहीं माना, पर साथ ही यह एक

आत्म-निर्भयता का भी कार्य था। वे बातें, जो अन्य राजदरबारियों ने उतना शारीरिक बल रखते हुए भी अपने मुंह से नहीं निकाली थीं, इसने राजा से कहने में जरा संकोच नहीं किया। यह मन का साहस है जिसे हम नैतिक बल कहते हैं।

*

ऐसा साहस इजराइल के नेता मूसा में भी था। इसने मिस्र देश के राजा फारो से यह मांग की थी कि वह सताये हुए यहूदी लोगों को स्वतंत्र कर देवे।

यही साहस पैगम्बर मोहम्मद में भी था जिसने अपने धार्मिक विचार अरबनिवासियों पर प्रकट कर दिये थे। उन लोगों के मृत्यु का डर दिखाने पर भी उसने चुप रहना अस्वीकार कर दिया।

गौतम बुद्ध में भी ऐसा ही साहस था। इन्होंने भारतवासियों को एक नवीन और उच्च रास्ता बताया और बोधिवृक्ष के नीचे दुष्ट प्रेतात्माओं द्वारा सताये जाने पर भी डर नहीं माना।

यह साहस ईसामसीह में भी था जिन्होंने लोगों को यह उपदेश दिया— "एक दूसरे से प्रेम करो।" न वे यरुशलम के धर्माचार्यों से डरे जिन्होंने उन्हें ऐसा सिखाने से मना किया था और न रूम के लोगों से जिन्होंने उन्हें सूली पर चढ़ा दिया था।

हमने अभी साहस की तीन श्रेणियों और तीन मात्राओं का निरूपण किया है।

शारीरिक साहस, जो अपनी रक्षा के लिये प्रयुक्त होता है।

वह साहस, जो मित्र, पड़ोसी और कष्ट में पड़ी मातृभूमि के लिये

दिखाया जाता है।

अंत में वह नैतिक साहस आता है जो अन्यायी मनुष्यों का सामना करना सिखाता है--चाहे वे कितने ही बलशाली क्यों न हों--और सच्चाई और न्याय की आवाज उनके कान तक पहुंचाता है।

*

अलमोड़े के राजा के पहाड़ी प्रदेश पर कुछ आक्रमणकारियों ने धावा बोल दिया। उनको मार भगाने के लिये एक नई सेना खड़ी की गई। उसमें कई लोगों ने अपना नाम दिया। प्रत्येक को एक बढ़िया तलवार दी गई।

राजा ने आज्ञा दी--"बढ़े चलो।"

उसी दम सबने बड़े जोर शोर से अपनी मियानों में से तलवारें खींच लीं और उन्हें ऊपर चमकाकर वे सब जोर से चिल्लाये।

"यह क्या?" राजा ने पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया--"स्वामी, हम तैयार हो रहे हैं जिससे हमारे शत्रु कहीं हमें असावधान पाकर हमपर चढ़ न आवें।"

"तुम डरपोक और घबराये हुए हो" राजा ने उनसे कहा, "तुमसे कुछ न होगा। जाओ, अपने घर लौट जाओ।"

तुम देखोगे कि राजा ने इस प्रकार तलवारें खींच लेने और शोर-गुल मचाने को जरा महत्त्व नहीं दिया। वह जानता था कि सच्ची वीरता में हल्ला करने और तलवारें बजाने की आवश्यकता नहीं होती।

इसके विपरीत, निम्नलिखित कहानी में तुम देखोगे कि कितनी

शांतिपूर्वक लोगों ने एक कार्य किया और किस प्रकार समुद्र के बड़े खतरे के सामने भी वे वीरतापूर्वक डटे रहे।

सन् १९१० के मार्च महीने के अंत में स्काटलैंड का एक जहाज आस्ट्रेलिया के यात्रियों को आशा अंतरीप ला रहा था। आकाश में बादल का नाम-निशान नहीं था। समुद्र नीला और शांत था।

अचानक आस्ट्रेलिया के पश्चिमी किनारे से छः मील दूर जहाज एक चट्टान से जा टकराया।

जहाज के सब कर्मचारी एकदम इधर उधर भागने लगे। सभी अपने कार्य में व्यस्त थे। सीटियों की आवाज सुनाई देने लगी। पर इस हलचल का कारण न तो कुप्रबंध था और न भय।

एक हुक्म गूंज उठा–

"डोंगियों पर चढ़ो।"

यात्रियों ने सुरक्षा की पेटियां पहन लीं।

एक नेत्रहीन व्यक्ति अपने नौकर का हाथ थामे डैक पर आया। सबने उसके लिये रास्ता छोड़ दिया। वह दुर्बल था। सब चाहते थे कि पहले उसको सहायता मिले।

कुछ क्षणों के बाद ही जहाज खाली हो गया, और फिर शीघ्र ही वह नीचे बैठ गया।

डोंगी पर बैठी हुई एक स्त्री ने गाना शुरू किया। लहरों के शोर-गुल से बीच बीच में गाने की आवाज दब जाती थी पर फिर भी जो एक-आध कड़ी मल्लाहों के कान में पड़ जाती उससे उनके बाहुओं को बल मिल रहा था।

"किनारे की ओर बढ़ो, नाविको,
किनारे की ओर बढ़ो।"

अंत में वे सब जहाज की दुर्घटना से बचे हुए लोग किनारे तक पहुंच गये और दयालु मछुओं द्वारा किनारे पर लाये गये।

एक यात्री के भी प्राण नहीं गये। इस प्रकार चार सौ पचास व्यक्तियों ने अपने शांत-संयत स्वभाव से अपनी रक्षा कर ली।

*

अब मैं तुम्हें एक ऐसे शांतिपूर्ण साहस के विषय में बताती हूं जिसने बिना किसी प्रदर्शन और धूम धड़ाके के कई उपयोगी और भले कार्य किये हैं।

एक ग्राम के साथ साथ एक गहरी नदी बहती थी। उसमें केवल हिन्दुओं के पांच सौ घर थे। उन ग्रामवासियों ने अभी तक भगवान् बुद्ध के उपदेश नहीं सुने थे। सो बुद्ध ने उनके पास जाने और उनको अपना उत्कृष्ट मार्ग बताने का निश्चय किया।

वे एक विशाल वृक्ष के नीचे बैठ गये। वृक्ष की शाखाएं नदी के किनारे तक फैली हुई थीं। ग्रामवासी सब नदी के परले किनारे पर इकट्ठे हुए थे। अब बुद्ध ने अपनी आवाज उठाई और उन्हें पवित्रता और प्रेम का संदेश सुनाया। उनके उपदेश एक चमत्कारक ढंग से उस बहते हुए पानी के ऊपर होते हुए नदी के परले किनारे तक पहुंच गये। फिर भी उन लोगों ने उनके वचनों पर विश्वास करना अंगीकार नहीं किया और उनके विरुद्ध वे बड़बड़ाने लगे।

उनमेंसे एक अभी और जानना चाहता था। उसने बुद्ध के निकट

जाना चाहा, पर वहां न कोई नौका थी और न ही पुल था। उस मनुष्य ने मन में दृढ़ साहस रख नदी के गहरे पानी पर चलना शुरू कर दिया। इस प्रकार वह उस गुरु के पास पहुंच गया। उसने उन्हें प्रणाम किया तथा बड़े हर्ष से उनके उपदेश सुने।

जैसा कि कहानी में कहा गया है कि उस मनुष्य ने चलकर नदी पार की थी, हम नहीं जानते। पर फिर भी उसने इस मार्ग पर चलकर हर तरह से साहस का ही परिचय दिया था—ऐसा मार्ग जो उन्नति-पथ की ओर ले जाता है। उसके उदाहरण से गांव के दूसरे लोगों ने भी फिर बुद्ध के उपदेश सुने और उनके अंतःकरण उन अत्यंत शुद्ध विचारों की ओर खुल गये।

*

एक साहस है जो नदियां लांघ सकता है। एक ऐसा है जो मनुष्य को न्यायपथ पर ले जाता है। पर सत्य मार्ग पर चलना शुरू करने की अपेक्षा उसपर दृढ़ रहने के लिये जिस साहस की आवश्यकता पड़ती है वह उससे भी बड़ा है।

मुर्गी और उसके बच्चों का एक दृष्टांत सुनो।

गौतम बुद्ध ने अपने शिष्यों से कहा था कि तुम अपनी ओर से पूरा प्रयत्न करो, फिर इसपर विश्वास रखो कि उन प्रयत्नों का फल तुम्हें मिलेगा ही।

उसने उनसे कहा—बिलकुल उसी तरह जिस तरह मुर्गी अंडे देकर उन्हें सेती है, पर वह इस बात की जरा भी चिंता नहीं करती कि क्या मेरे बच्चे अपनी चोंचों से अंडा फोड़कर दिन के प्रकाश में आ जाने में

समर्थ हो जायंगे ? तुम्हें अब अधिक डर नहीं होना चाहिये। यदि तुम सत्य मार्ग पर दृढ़ रहोगे तो तुम प्रकाश तक भी अवश्य पहुंचोगे।

ठीक रास्ते पर चलना, आवेगों, मूढ़ विचारों और कष्टों का सामना करना, सदा आगे ही, प्रकाश की ओर बढ़ने के प्रयत्न में लगे रहना ही सच्चा साहस है।

*

प्राचीन समय में ब्रह्मदत्त नाम का एक राजा बनारस में राज करता था। उसके शत्रुओं में से एक ने–जो किसी और देश का राजा था–अपने हाथी को युद्ध की शिक्षा दी थी।

लड़ाई की घोषणा हो गई। वह विशाल हाथी अपने स्वामी राजा को बनारस की चार-दीवारी तक ले आया।

दीवारों के ऊपर से उन घिरे हुए सैनिकों ने उबलते द्रव्यों और गोफन द्वारा फेंके हुए पत्थरों की उनपर झड़ी लगा दी। इस भयानक वर्षा के सामने एक बार तो हाथी पीछे हट गया। पर जिस आदमी ने उसे सधाया था वह उसकी ओर दौड़ा और बोला–

"अरे हस्ती, तू तो वीर है; वीर के समान कार्य कर और फाटक को जमीन पर दे मार।"

इन शब्दों से उत्साहित हो उस विशाल जंतु ने फाटक पर एक जोर की चोट की, अंदर प्रवेश किया और इस प्रकार राजा को विजय दिलाई।

इसी प्रकार साहस बाधाओं और कठिनाइयों को जीतकर विजय का पथ प्रशस्त करता है।

*

देखो, किस प्रकार सबको, चाहे वे मनुष्य हों या पशु, बढ़ावे के शब्दों से सहायता पहुंचाई जा सकती है।

मुसलमानों की एक अच्छी पुस्तक में उदारहृदय व्यक्ति आबू सैयद की एक कहानी है। वह हमें बड़ा अच्छा उदाहरण देती है।

एक बार वह ज्वर से पीड़ित हुआ। उसके मित्रगण उसके स्वास्थ्य का हाल-चाल पूछने उसके घर गये। कवि के लड़के ने द्वार पर उनका स्वागत किया। उसके होठों पर मुस्कराहट थी क्योंकि रोगी पहले से अच्छा था। वे लोग उसके कमरे में पहुंचे और बठ गये। अपने सदैव के हंसोड़ स्वभाव के अनुसार उसे बोलते सुनकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। अब क्योंकि गर्मी बढ़ चली थी, उसे नींद आ गई। और लोग भी सब सो गये।

सायंकाल तक सब उठ बैठे। आबू सैयद ने अभ्यागतों का जल-पान से सत्कार किया और कमरे को सुवासित करने के लिये धूपबत्तियां जला दीं।

आबू सयद ने तब प्रार्थना की, फिर उसने उठकर एक छोटी सी स्वरचित कविता पढ़नी आरंभ की—

"दुःख के समय निराश न हो, क्योंकि प्रसन्नता की एक घड़ी तेरे सारे दुःख-दर्द भगा देगी।

मरुभूमि की तेज गर्म हवा बह रही है, पर वह ठण्डे समीर में बदल सकती है।

काली घटा उमड़ रही है, पर वह जल-प्रलय करने से पहले ही हट सकती है।

आग लग सकती है, पर तुम्हारे संदूकों और पेटियों को छुए बगैर बुझ जायगी।

शोक आता है, पर चला जाता है। इसलिये जब विपत्ति आवे, धैर्यवान् बनो।

समय सब चमत्कारों से बड़ा है। ईश्वर की कृपा से तुम्हें सदा अपने कल्याण की आशा करनी चाहिये।"

इस आशा से भरी सुन्दर कविता को सुनकर सब प्रसन्नता और बल अनुभव करते हुए अपने अपने घर लौट गये। इस प्रकार एक रोगी मित्र ने अपने स्वस्थ मित्रों की सहायता की।

यह निश्चय है कि जो लोग स्वयं साहसी होते हैं वे ही दूसरों को साहस बंधा सकते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे एक जलती मोमबत्ती अपनी लौ से दूसरी मोमबत्तियों को जला सकती है।

वीर बालको और बालिकाओ, तुमने यह कहानी पढ़ी है। तुम दूसरे को साहस बंधाना सीखो और स्वयं भी साहसी बनो।



३

प्रफुल्लता

किसी वर्षाप्रधान देश के एक बड़े शहर में एक दिन तीसरे पहर मैंने सात आठ गाड़ियां बच्चों से भरी देखीं। वे लोग सबेरे ही गांवों की ओर खेतों में खेल कूद के लिये गये थे। पर वर्षा के कारण उन्हें समय से पहले ही वापिस लौटना पड़ा।

फिर भी बच्चे हंस रहे थे, गा रहे थे और आने जानेवालों की ओर शरारतभरे इशारे कर रहे थे। इस निराशा के समय भी उन्होंने अपनी प्रसन्नता बनाये रखी थी। एक उदास होता तो दूसरे अपने गानों से उसे प्रफुल्लित कर देते। काम-काज में व्यस्त राहगीर जब उनकी खिलखिलाहट सुनते तो उस क्षण उन्हें ऐसा प्रतीत होता मानों आसमान की काली घटा कुछ कम गहरी हो गई हो।

खुरासान का एक राजकुमार था। नाम था अमर। खूब ठाठ-बाट की उसकी जिन्दगी थी। एक बार जब वह लड़ाई में गया तो उसके रसोईघर के सामान को लेकर तीन सौ ऊंट उसके साथ गये थे। दुर्भाग्य से एक दिन वह खलीफा इस्माइल द्वारा बंदी बना लिया गया। पर दुर्भाग्य भूख को तो टाल नहीं सकता। उसने पास खड़े अपने मुख्य रसोइये को—जो एक भला आदमी था—कहा : भाई, कुछ खाने को तो तैयार कर दे।

उस बेचारे के पास केवल एक मांस का टुकड़ा बचा था। उसने उसको हांडी में उबलने को रख दिया और भोजन को कुछ अधिक स्वादिष्ट बनाने के लिये स्वयं किसी साग-सब्जी की खोज में निकला।

इतनेमें एक कुत्ता वहां से गुजरा। मांस की सुगंधि से आकर्षित हो उसने अपना मुंह हांड़ी में डाल दिया। पर भाप की गर्मी पा वह तेजी से और कुछ ऐसे बेढंगे तरीके से पीछे हटा कि उसका सिर उस हांड़ी में फंस गया। वह इतना घबरा गया था कि हांड़ी समेत वह वहां से भागा।

अमर ने जब यह देखा तो उच्च स्वर में हंस पड़ा। उसके अफसर ने—जो उसकी चौकसी पर नियुक्त था—उससे पूछा : यह हंसी कैसी ? इस दुःख के समय भी तुम हंस रहे हो ?

अमर ने भागते हुए कुत्ते की ओर इशारा करते हुए कहा : मुझे यह सोचकर हंसी आती है कि आज प्रातः तक मेरी रसोई के सामान को ले जाने के लिये तीन सौ ऊंटों की आवश्यकता पड़ती थी। अब उस सबके लिये एक कुत्ता ही काफी हो गया है।

अमर को प्रसन्न रहने में एक स्वाद मिलता था। हालां कि दूसरों को प्रसन्न रखने के लिये वह उतना प्रयत्नशील नहीं था, फिर भी उसके विनोदी स्वभाव की प्रशंसा किये बिना हम नहीं रह सकते। यदि कोई इतनी गंभीर विपत्ति में भी प्रसन्न रह सकता है तो क्या हम मामूली चिंता फिकर में मुंह पर एक मुस्कराहट भी नहीं ला सकते ?

*

प्रफुल्लता

फारिस देश में एक स्त्री थी जो शहद बेचने का व्यवसाय करती थी। उसकी बोलचाल का ढंग बड़ा आकर्षक था। उसकी दूकान के चारों ओर ग्राहकों की भीड़ लगी रहती थी। इस कहानी को सुनानेवाला कवि कहता है कि यदि वह शहद की जगह विष भी बेचती तो लोग उससे वह भी शहद समझकर खरीद लेते।

एक दुष्ट प्रकृतिवाले मनुष्य ने जब देखा कि वह स्त्री इस व्यवसाय से बहुत लाभ उठा रही है तो उसने भी इसी धंधे को अपनाने का निश्चय किया।

दूकान तो उसने खोल ली, पर शहद के सजे सजाये वर्तनों के पीछे उसकी अपनी आकृति कठोर की कठोर ही बनी रही। ग्राहकों का स्वागत वह सदा अपनी कुटिल भृकुटि से ही करता। सो सब उसकी चीज छोड़ आगे बढ़ जाते। कवि आगे कहता है कि एक मक्खी भी उसके शहद के पास फटकने का साहस नहीं करती थी। शाम होती, पर उसके हाथ खाली के खाली ही रह जाते। एक दिन एक स्त्री उसे देखकर अपने पति से बोली; 'कडुआ' मुख शहद को भी कडुआ बना देता है।

क्या वह व्यवसायी स्त्री केवल ग्राहकों को आर्कषित करने के लिये ही मुस्कराती थी? ना, हमें तो यह विश्वास है कि उसकी प्रफुल्लता उसके भले स्वभाव का एक अंग थी। संसार में हमारा कार्य केवल बेचना और खरीदना ही नहीं है। हमें यहां एक दूसरे के मित्र बनकर रहना है। उस भली स्त्री के ग्राहक यह जानते थे कि वह एक दूकान-दारिन के अतिरिक्त कुछ और भी थी—वह संसार की एक प्रसन्नमुख

नागरिका थी।

*

नीचे मैं जिन महापुरुष का हाल बताने जा रही हूं उनकी प्रसन्नता ऐसे प्रवाहित होती थी जैसे एक सुन्दर उद्गम स्थान से पानी की धारा। इनको न लाभ की इच्छा थी न ग्राहकों की। ये प्रसिद्ध और गौरवशाली राम थे।

राम ने दस शीश और बीस भुजाओंवाले रावण को मारा था। मैं तुम्हें इस कहानी का प्रारंभ पहले बता चुकी हूं। हां तो यह युद्ध बड़ा भयानक और कई जातियों के बीच में था। हजारों बंदरों और रीछों ने राम की सेवा में अपने प्राणों की आहुति दे दी थी। उनके शत्रु-राक्षसों के शवों के भी ढेर लगे थे। उनका राजा निर्जीव पृथ्वी पर पड़ा था। ओह! उसको मार गिराना कितना कठिन था! वार पर वार करके रामचंद्रजी ने उसके दस शीश और बीस भुजाएं काटी थीं, पर कैसे वे पुनः उत्पन्न हो जाते थे! उनको लगातार–एक के बाद एक–इतने काटने पड़े कि अंत में ऐसा प्रतीत होने लगा मानों आकाश से सिर और भुजाओं की वर्षा हो रही हो।

जब यह भयानक युद्ध समाप्त हुआ तो वे सब बंदर और रीछ जो लड़ाई में मारे गये थे पुनर्जीवित किये गये। वे ऐसे उठ खड़े हुए मानों एक बड़ी सेना आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़ी हो। यशस्वी राम का व्यवहार विजय के बाद सरल और शांत था। उन्होंने अपने विश्वस्त मित्रों की ओर अपनी कृपापूर्ण दृष्टि उठाई।

तभी विभीषण जो अब रावण के सिंहासन का उत्तराधिकारी था

इन वीरों के लिये–जिन्होंने इतने साहसपूर्वक इस युद्ध में भाग लिया था–एक गाड़ी भर जवाहिरात और बढ़िया कपड़े लाया।

राम बोले: सुनो मित्र विभीषण! तुम ऊपर हवा में चढ़ जाओ और वहां से इस अपनी भेंट को सेना के सम्मुख छितरा दो।

विभीषण ने ऐसा ही किया। अपने रथ को वह ऊपर ले गया और वहां से उसने वे सब चमचमाते गहने और सुन्दर रंग-बिरंगे कपड़े नीचे की ओर डाल दिये।

अब क्या था। इस गिरती हुई निधि के ऊपर सब रीछ और बंदर–एक दूसरे को धकेलते–टूट पड़े। एक अच्छा-खासा तमाशा खड़ा हो गया।

राम और उनकी पत्नी सीता खिलखिलाकर हंस पड़े। उनका भाई लक्ष्मण भी अपनी हंसी न रोक सका।

केवल वीर पुरुष ही इस प्रकार हंस सकते हैं। शुद्ध और सरल आनंद से बढ़कर और क्या वस्तु प्रिय हो सकती है? वास्तव में उत्साह और साहस के मूल में एक ही भावना काम करती है। जीवन के कठिन क्षणों में प्रसन्नता बनाये रखना ही एक प्रकार का साहस है और यह मुदित स्वभाव का अंग है।

निश्चय ही हर समय हंसने की आवश्यकता नहीं, पर जीवन, प्रसन्न-गंभीर भाव और आमोदी स्वभाव जितनी मात्रा में हों उतना ही अच्छा है। यह इन्हीं गुणों का प्रभाव है कि मां गृह को बच्चों के लिये आनंद-मय बना देती है; एक नर्स रोग को शीघ्र दूर करने में सफल होती है;

स्वामी अपने सेवकों का काम सरल कर देता है; एक श्रमजीवी अपने साथियों में सद्भावना उत्पन्न करता है : यात्री अपने संगियों को उनकी कड़ी यात्रा में सुख पहुंचाता है; एक नागरिक अन्य नागरिकों के हृदयों में आशा को बनाये रखता है।

और तुम, हे प्रसन्नचित्त बालको और बालिकाओ, अपनी प्रफुल्लता से क्या नहीं कर सकते?



४

आत्म-निर्भरता

प्राचीन समय के अरबनिवासियों में हातिमताई अपनी उदारता और दानशीलता के लिये बहुत प्रसिद्ध था।

एक बार उसके मित्रों ने उससे पूछा, "क्या तुम कभी ऐसे आदमी से भी मिले हो जो तुमसे अधिक उदार हो?"

उसने उत्तर दिया, "हां"।

"वह कौन है?"

"एक बार मैंने एक दावत दी जिसके लिये चालीस ऊंट हलाल किये गये थे। जो चाहे इस दावत में शरीक हो सकता था। मैं अपने कुछ सरदारों को लेकर दूर के मेहमानों को आमंत्रित करने चला। रास्ते में मुझे एक लकड़हारा मिला जो एक कांटेदार झाड़ी की लकड़ियां काटना समाप्त कर चुका था। उसकी जीविका का साधन यही था। उसे गरीब देख मैंने उससे पूछा—हातिमताई इतनी दावतें देता है, तुम उन्हीं में क्यों नहीं जाते? उसने उत्तर में कहा—जो अपनी रोटी आप कमाते हैं, उनको हातिमताई की दरिया-दिली की आवश्यकता नहीं।"

हातिमताई ने ऐसा क्यों कहा कि वह लकड़हारा उससे अच्छा मनुष्य है?

दूसरों को भेंटस्वरूप कुछ दे देने से स्वयं काम करके अपनी जरूरतों

को पूरा कर लेना उसे कहीं अच्छा लगा। क्योंकि लेनेवाले को इसमें न तो परिश्रम करना पड़ता है और न वह उसके लिये कोई त्याग ही करता है। इतना ही नहीं वरन् यह कार्य औरों को भी दूसरों पर निर्भर रहने का पाठ पढ़ाता है।

हां, यह तो स्वाभाविक ही है कि एक मित्र दूसरे मित्र को उपहार देता है। यह भी ठीक है कि बलवान् बाहुओं को दीन दुःखी मनुष्यों की सहायता के लिये बढ़ना चाहिये। पर एक सबल और चुस्त मनुष्य को अपने हाथ से ही काम करना उचित है, दान लेने के लिये दूसरों के आगे हाथ पसारना ठीक नहीं। हां, जो लोग अपना जीवन सत्य की खोज और गंभीर चिंतन में ही व्यतीत करते हों उनकी बात अलग है। वे निःसंकोच दूसरों का दान ग्रहण कर सकते हैं।

लकड़हारे का चरित्र कितना भी भला हो पर फारस के राजकुमार गुश्तास्प का उससे भी महान् है। उसकी कहानी यों है।

प्राचीन समय में गुश्तास्प नाम का एक राजकुमार था। उसके पिता ने उसे राजसिंहासन से वंचित कर दिया। इससे वह बहुत दुःखी हुआ और अपनी जन्मभूमि छोड़ पश्चिम की ओर चल पड़ा। अकेला और भूखा प्यासा गुश्तास्प समझ गया कि जीवन के लिये उसे अपने बाहुबल पर ही निर्भर रहना पड़ेगा। जिस देश में पहुंचा वहां के मुखिया के पास जाकर उसने कहा—मैं एक होशियार लेखक हूं, आप कृपा करके मुझे किसी मुंशी के पद पर नियुक्त कर दें। मुखिया को उस समय किसी लेखक की जरूरत नहीं थी, इसलिये गुश्तास्प से उसने कुछ दिन ठहरने को कहा। पर वह इतना भूखा था कि प्रतीक्षा करना

उसके लिये संभव नहीं था। वहां से चलकर वह कुछ ऊंटवालों के पास गया और उनसे किसी काम के लिये प्रार्थना की। उनको भी किसी नए आदमी की जरूरत नहीं थी। पर उसकी दरिद्रता और लाचारी देखकर उन्होंने उसे कुछ खाने को दे दिया।

थोड़ी दूर आगे चलकर गुश्तास्प एक लुहार की दूकान के सामने ठहर गया और लुहार से कुछ काम मांगा।

लुहार ने कहा—आओ, तुम मुझे इस लोहे के पीटने में सहायता दे सकते हो। यह कह उसने एक हथौड़ा गुश्तास्प के हाथ में थमा दिया।

राजकुमार में बड़ा बल था; उसने वह भारी हथौड़ा उठा लिया और ऐसा जमाया कि पहली चोट में ही अहरन के दो टुकड़े हो गये। गुस्से में भरे हुए लुहार ने उसी समय उसे दरवाजे का रास्ता दिखा दिया।

अत्यंत गंभीर व्यथा और शोक में डूबा हुआ गुश्तास्प फिर काम की खोज में निकल पड़ा। जिस तरफ वह जाता अनुपयोगी ही साबित होता। अंत में वह एक किसान से मिला जो एक अनाज के खेत में काम कर रहा था। उसे गुश्तास्प की अवस्था पर दया आई और उसने उसके रहने और खाने पीने का प्रबंध कर दिया।

एक दिन यह खबर फैली कि रूम के राजा की लड़की विवाह-योग्य हो गई है। राजवंश के सब युवक उस उत्सव में आमंत्रित किये गये। गुश्तास्प ने भी वहां जाने का निश्चय किया। सबके बीच वह भी मेज के सामने जा बैठा। राजकुमारी किताबन ने उसे देखा और वह उसपर रीझ गई। अपने अनुराग के चिह्नस्वरूप गुलाब के फूलों का एक गुच्छा उसने उसे भेंट में दिया।

राजा ने गुश्तास्प की दरिद्रता के प्रति तीव्र अरुचि प्रकट की पर वह उससे अपनी लड़की की शादी रोक देने का साहस नहीं कर सकता था। ज्यों ही उनका ब्याह हो चुका उसने उनको अपने महल से निकाल दिया। वे दोनों जंगल में रहने के लिये चल पड़े। वहां उन्होंने नदी के पास ही अपने लिये एक झोंपड़ी बना ली।

गुश्तास्प बड़ा अच्छा शिकारी था। प्रतिदिन वह नाव द्वारा नदी पार जाता और वहां से कभी बारहसिंगा और कभी जंगली गदहा पकड़ लाता। अपने शिकार में से आधा वह नाववाले को देता और बाकी अपनी स्त्री के पास ले आता।

एक दिन नाववाला माबरीन नाम के एक युवक को अपने साथ ले आया। वह गुश्तास्प से मिलना चाहता था। माबरीन बोला—मैं राजा की दूसरी लड़की—तुम्हारी स्त्री की छोटी बहन—से ब्याह करना चाहता हूं। राजा के देश में एक भेड़िया बहुत उपद्रव करता है। जब तक मैं उसे मार न दूं उस लड़की से मेरी शादी नहीं हो सकती। मुझे समझ में नहीं आता कि मैं यह कैसे करूं।

शिकारी गुश्तास्प ने उत्तर दिया—तुम्हारे लिये यह काम मैं कर दूंगा।

वह जंगल की ओर चल पड़ा। ज्यों ही उसने भेड़िये को देखा, दो तीर उसको मारे और फिर अपने शिकारी चाकू से उसका सिर काट लिया।

राजा मरे हुए जानवर को देखने आया और उसने प्रसन्नतापूर्वक अपनी दूसरी लड़की माबरीन को दे दी।

कुछ दिन बाद नाववाला एक और युवक को गुश्तास्प के पास ले

आया, इसका नाम था अहरुन। यह राजा की तीसरी लड़की को ब्याहना चाहता था। परंतु इससे पहले उसे एक अजगर को मारना था। गुश्तास्प ने इस नए दुष्कर कार्य को करने के लिये उसे भी वचन दे दिया।

उसने चाकुओं की एक गेंद बनाई, उसके चारों ओर पैनी कीलें जड़ी हुई थीं। अब वह अजगर की खोज में निकला। जंगल में जाकर गुश्तास्प ने देखा कि अजगर की सांसों में से आग निकल रही है। उसने उसकी देह में बहुत से तीर मारे, स्वयं उसके पंजे से बचने के लिये वह इधर उधर कूद जाता था। तभी उसने एक बरछी के सिरे पर वह चाकुओं की गेंद लगाई और उसको अजगर के खुले मुंह में घुसेड़ दिया। उसने अपना मुंह बंद कर लिया और वह गिर पड़ा। तब राजकुमार ने अपनी तलवार से उसका काम तमाम कर दिया।

इस तरह से अहरुन को राजा की तीसरी लड़की मिल गई।

तुम्हें यह जानकर आश्चर्य नहीं होगा कि शीघ्र ही यह वीर राजकुमार उत्तराधिकारी के रूप में फारस का राजा बन गया। गुश्तास्प के राज्यकाल में ही जरदुश्त या जोरोस्टर नाम के पारसी संत हुए थे। इन्होंने फारसवासियों को अहुर्मज्द का धर्म सिखाया था। अहुर्मज्द प्रकाश, सूर्य और अग्नि, सच्चाई और न्याय का प्रभु माना जाता है।

*

यह तो तुमने देख ही लिया है कि गुश्तास्प को संसार में न तो एकबारगी स्थान मिला और न काम ही। उसने कई कामों के लिये प्रयत्न किया और निफलता ही पाई। यही नहीं, शुरू में तो वह कई लोगों की

नाराजगी का कारण बना–जैसे उस भले लुहार की।

अंत में उसको अपना पद प्राप्त हो गया और इस तरह वह प्रजाओं पर बुद्धिमानी से शासन करके उनकी सहायता कर सकने में समर्थ हुआ।

जिस लकड़हारे के बारे में हम अभी कह चुके हैं उससे वह इसी बात में श्रेष्ठ था क्योंकि इसने दूसरों की सहायता की थी, जब कि लकड़हारा केवल अपने लिये काम करता था। गुश्तास्प उदार हातिमताई से भी श्रेष्ठ है, क्योंकि उसकी तरह अपना अतिरिक्त धन दे देने के स्थान पर फारस के राजकुमार ने अपना बाहुबल दिया और दूसरों की भलाई के लिये अपने प्राण तक खतरे में डाल दिये।

जो मनुष्य अपने ऊपर निर्भर रहकर, अपनी शक्ति से, न केवल अपनी आवश्यकताओं को पूरी करता है पर अपने पड़ोसियों की समृद्धि और भलाई की भी साथ साथ वृद्धि करता है, वह जितना सम्मान के योग्य है उतना और कोई नहीं।

जो अपने कार्यों से अपने पड़ोसियों के आराम और समृद्धि के कारण बनते हैं उन सबके आगे हम नतमस्तक हैं, चाहे वह धर्माचार्य हो, इंजीनियर हो या लकड़हारा, लेखक हो या मजदूर, व्यवसायी, लुहार, अनुसंधायक–कोई भी हो। हम उस कर्मी का भी आदर करते हैं जो अपने और साथ ही अपने साथियों के लाभ के लिये साझे के कारखानें दूकानें, कंपनियां और सिंडिकेट चलाता है और प्रत्येक को अपने अधिकारों की मांग पेश करने का अवसर देता है। इस प्रकार एक अकेले व्यक्ति की दुर्बल और प्रार्थक आवाज के स्थान पर समूह की शक्तिशाली

आवाज सुनाई पड़ती है।

ऐसे कारबारी साझेदार इस प्रकार श्रमजीवियों को अपनी शक्ति पर भरोसा रखना और एक दूसरे की सहायता करना भी सिखाते हैं।

विद्यार्थियो! तुम भी अध्यापक द्वारा दिये हुए काम में अपनी बुद्धि को लगाकर उसे बढ़ाना सीखो। ज्ञान की सीढ़ी के ऊंचे से ऊंचे डंडे पर चढ़ते हुए तुम सदा अपने ऐसे साथी की सहायता करने का अवसर खोजो जो तुमसे कम होशियार और तेज हो।

परियों की कहानियों में केवल एक नाम ले लेने, लैंप को रगड़ देने, लकड़ी को घुमा देने से भूत प्रकट हो जाते हैं। वे मनुष्यों को हवा में उड़ा ले जाते हैं, पलक मारते महल खड़े कर देते, जमीन में से घुड़सवारों और हाथियों की सेना निकाल देते हैं।

परंतु निजी प्रयत्न इनसे भी बड़े चमत्कार उत्पन्न करता है। यह पृथ्वी को उत्तम शस्य से ढक देता है, जंगली जानवरों को वश में कर लेता है, पर्वतों को भेद देता है, बांधों और पुलों का निर्माण करता है, जल में जहाज को तथा आकाश में उड़नेवाले वायुयान को गति देता है: सबकी भलाई तथा सुरक्षा के इतने साधन उपस्थित करता है।

इसी प्रयत्न के द्वारा मनुष्य अधिक सज्जन, अधिक योग्य और अधिक दयाशील बनता है। सच्ची उन्नति वास्तव में इसी में है।

५

धैर्य और अध्यवसाय

पंजाब-निवासियों का एक गाना है–

सदा ना बागीं बुलबुल बोले,
सदा ना बाग बहारां।
सदा ना राज खुशी दे होंदे,
सदा न मजलिस यारां।

इस गीत का भाव यह है कि हम सदैव संतुष्ट रहने की आशा नहीं कर सकते तथा धीरज एक अत्यंत उपयोगी गुण है। हमारे जीवन में ऐसे दिनों की कमी नहीं है जब कि हम इस गुण का अनुशीलन न कर सकते हों।

तुम्हें एक अत्यंत कार्यव्यस्त व्यक्ति से कुछ काम है। तुम उसके घर जाते हो। वहां पहले से ही कई मिलनेवाले उपस्थित हैं; मिलने से पहले वह तुमसे बड़ी लंबी प्रतीक्षा करवाता है। पर तुम वहां शांति-पूर्वक–शायद कई घंटे तक–ठहरे रहते हो। तुम धैर्यवान् हो।

किसी और समय, जिससे तुम मिलने जाते हो वह उस समय अपने घर में अनुपस्थित होता है। अगले दिन तुम फिर जाते हो पर उसका द्वार तुम्हें अब भी बंद मिलता है। तीसरी बार तुम फिर पहुंचते हो। अबके वह बीमार है, मिल नहीं सकता। तुम कुछ दिन निकल जाने

देते हो, उसके बाद उसके घर का रास्ता फिर पकड़ते हो। यदि तब भी कोई नई घटना उससे मिलने से तुम्हें रोक दे तो तुम निरुत्साहित नहीं होते, वरन् तुम तब तक अपने प्रयत्न में लगे रहते हो जब तक तुम उससे मिल नहीं लेते। इस प्रकार का धैर्य अध्यवसाय कहलाता है।

अध्यवसाय—यह सक्रिय धैर्य है, अर्थात् गतिमान् धैर्य।

*

जैनेवा का रहनेवाला प्रसिद्ध नाविक कोलम्बस स्पेन से जहाज लेकर पश्चिम के अज्ञात समुद्रों को पार करने निकला। दिन बीत गये, सप्ताह बीत गये, अपने साथियों की बड़बड़ाहट को सहते हुए वह एक नई पृथ्वी को खोज निकालने की धुन में दृढ़ रहा। विलंब हुए, कई कठिनाइयां उपस्थित हुईं पर जब तक वह अमरीका के शुरू के द्वीपों तक नहीं पहुंचा, उसने दम नहीं लिया। इस प्रकार उसने एक नए महाद्वीप को खोज निकाला।

वह अपने साथियों से किस बात की आशा रखता था? वह उनसे केवल यह चाहता था कि वे धैर्य रखें। उनका कर्तव्य केवल इतना था कि वे उसपर भरोसा रखें और नम्रतापूर्वक उसकी आज्ञा के अधीन रहें। पर इस लक्ष्य-प्राप्ति के लिये उसके स्वयं के अंदर किस चीज का होना आवश्यक था? उसमें उस अक्षुण्ण उत्साह और गंभीर लगन की आवश्यकता थी जिसे हम अध्यवसाय कहते हैं।

प्रसिद्ध कुंभकार बर्नार्ड पालिसी (Bernard Palissy) की इच्छा थी कि प्राचीन समय के बरतनों पर जो चमकीले रंगों द्वारा मीने का काम होता था उसके लुप्त भेद को वह ढूंढ़ निकाले। अपनी इस

खोज को उसने बिना थके महीनों और वर्षों जारी रखा। इन रंगों को खोज निकालने के उसके प्रयत्न बहुत समय तक तो निष्फल ही रहे। जो कुछ पूंजी उसके पास थी वह सब उसने इसी कार्य के अर्पण कर दी। रात दिन वह अपनी भट्ठी के सामने नई-नई क्रियाओं द्वारा बरतनों को बनाने और उनको पकाने के सतत प्रयत्नों में लगा रहता था। इस काम में कोई उसकी सहायता तो करता ही न था, उसे उत्साहित भी नहीं करता था, बल्कि उसके सब पड़ोसी और मित्र उसे सनकी समझते थे। उसकी स्त्री तक उसके कार्यों के लिये उसे बुरा भला कहती रहती थी।

धन के अभाव में उसे कई बार अपनी खोज रोक देनी पड़ती पर ज्यों ही वह इन परीक्षणों के लिये अपने आपको समर्थ पाता, त्यों ही एक नए उत्साह से वह फिर उनमें जुट जाता। अंत में एक दिन भट्ठी को तपाने के लिये उसके घर में ईंधन नहीं रहा। घर के लोगों की चीख-पुकार की जरा भी परवाह न करते हुए उसने अपना सारा लकड़ी का असबाब एक एक करके आग में झोंक दिया। जब सब कुछ जल गया तो उसने भट्ठी खोली। क्या देखता है कि जिन रंगों की खोज में उसने ये इतने वर्ष लगाये हैं वे सब यहां जगमग जगमग कर रहे हैं। अंत में यही चीज उसकी यशप्राप्ति का कारण बनी।

उसकी स्त्री तथा उसके मित्रों में किस चीज का अभाव था जिसके कारण वे बिना उसे कष्ट पहुंचाये तथा उसके काम को अधिक कठिन बनाये उसकी सफलता की घड़ी की प्रतीक्षा नहीं कर सके थे? वह सिवाय धैर्य के और कुछ नहीं था। और वह कौनसी ऐसी चीज थी

जिसका उसके अपने अंदर अभाव नहीं था, जिसने कभी उसे धोखा नहीं दिया और जिसने अंत में उसे कठिनाइयों और व्यंग्योक्तियों पर विजय प्राप्त करवाई ? यह वास्तव में अध्यवसाय की शक्ति थी—ऐसी शक्ति जो सब शक्तियों से अधिक बलवती है।

इस संसार में कोई वस्तु ऐसी नहीं जो अध्यवसाय का रास्ता रोक सके। बड़े से बड़े काम भी सदा छोटे छोटे अथक प्रयत्नों के ही परिणाम होते हैं।

ऐसी बड़ी-बड़ी चट्टानें हैं जो वर्षा की बूंदों के लगातार एक ही जगह पड़ने से पूरी की पूरी घिस गई हैं।

रेत का एक कण अपने आपमें कोई शक्तिशाली वस्तु नहीं पर ये ही रेत के कण जब इकट्ठे हो जाते हैं तब एक टीला बन जाता है और इस प्रकार वे समुद्र की लहरों तक को रोक देते हैं।

जब तुम प्राकृतिक इतिहास पढ़ते हो तो तुम्हें बताया जाता है कि किस प्रकार अति क्षुद्र जीव एक के ऊपर एक जमा होकर समुद्र में (मूंगे के) पहाड़ खड़े कर देते हैं और उनके अनवरत प्रयत्नों से पानी के ऊपर सुन्दर सुन्दर द्वीप और द्वीपसमूह निकल आते हैं।

तो क्या तुम सोचते हो कि तुम्हारे नन्हें नन्हें अनवरत प्रयत्न महान् कार्यों को साधित नहीं कर सकते ?

प्रसिद्ध दार्शनिक शंकर जिनसे मलाबार देश का मुख उज्ज्वल हो रहा है अब से लगभग बारह सौ वर्ष पहले हुए थे। उन्होंने बचपन में ही संन्यासी बनने का निश्चय कर लिया था।

उनकी इच्छा के महत्त्व को स्वीकार करते हुए भी उनकी माता ने

बहुत समय तक उनको इस प्रकार का जीवन ग्रहण करने की आज्ञा नहीं दी।

एक दिन माता और पुत्र दोनों नदी में स्नान करने के लिये गये। नदी में प्रवेश करते ही शंकर को एकदम ऐसा प्रतीत हुआ कि उनका पांव किसी ग्राह ने पकड़ लिया है। मृत्यु निकट जान पड़ी। पर उस कठिन समय में भी उस वीर बालक के अंदर वही महान् आकांक्षा प्रबल थी। वह चिल्लाकर अपनी मां से बोला—"मैं तो गया। एक ग्राह ने मुझे पकड़ लिया है। कम से कम मुझे संन्यासी होकर तो मरने दो।"

मां ने निराश होकर रोते रोते कहा—"अच्छा, अच्छा, मेरे बेटे!" शंकर का सौभाग्य! उस समय उनमें ऐसा बल आ गया कि पांव को छुड़ाकर वे अपने आपको किनारे तक ले आने में समर्थ हो गये।

उसके बाद उनकी आयु के साथ साथ उनका ज्ञान भी बढ़ता गया। वे एक गुरु बन गये। अपने अद्भुत जीवन की अंतिम घड़ी तक वे ज्ञानोपदेश के महान् कार्य में लगे रहे।

भारत से प्रेम रखनेवाले सभी लोग महाभारत के सुन्दर काव्य से तो परिचित होंगे ही। कई शताब्दियां पहले यह संस्कृत में लिखा गया था। कुछ वर्ष पहले तक बिना संस्कृत जाने कोई यूरोपीय इसे पढ़ नहीं सकता था और संस्कृत जाननेवाले यूरोपीय कम ही थे। इसलिये यूरोप की भाषाओं में से किसी एक में इसका अनुवाद होना आवश्यक हो गया।

बाबू प्रतापचंद्र राय ने अपने आपको इस काम में लगा देने का निश्चय किया। अपने देश में ही उन्हें एक ऐसे विद्वान् मित्र मिल गये जो इस

संस्कृत की पुस्तक का अंग्रेजी में अनुवाद कर सकते थे। उनका नाम था किशोरीमोहन गांगुली। इस पुस्तक के सौ खंड क्रमशः प्रकाशित हुए।

बारह वर्ष तक प्रतापचंद्र राय इस काम में लगे रहे। उन्होंने अपनी सारी पूंजी इस पुस्तक के प्रकाशन में लगा दी। और जब अपने पास कुछ न बचा तो देश के भिन्न भिन्न भागों में घूमे। और जो कोई भी कुछ देने में रुचि रखते थे उन सबसे उन्होंने सहायता मांगी। इन सहायता देनेवालों में राजा भी थे और किसान भी, विद्वान् भी और अनपढ़ भी, यूरोप और अमरीका के मित्र भी नहीं छूटे थे।

इन्हीं यात्राओं में से एक में उनको ऐसे घातक ज्वर ने धर दबाया कि वही उनकी मृत्यु का कारण बन गया। रोग की अवस्था में भी उनके सारे विचार इस कार्य की समाप्ति पर ही केंद्रित थे। ऐसे समय में भी जब कष्ट के कारण वे अधिक बातचीत नहीं कर सकते थे उन्होंने अपनी स्त्री से कहा—"यह पुस्तक समाप्त होनी ही चाहिये। मेरे क्रिया-कर्म पर खर्च मत करना, क्योंकि पुस्तक के प्रकाशन के लिये पैसे की आवश्यकता पड़ेगी। तुम भी जितना हो सके सादा जीवन व्यतीत करना जिससे महाभारत के लिये पैसा बच सके।"

वे भारत और उसके महाकाव्य के लिये प्रेम से भरा हृदय लिये हुए मरे।

उनकी विधवा सुन्दरीबाला राय ने श्रद्धापूर्वक उस महत् इच्छा का पालन किया। एक वर्ष में अनुवादक महोदय ने कार्य पूरा कर दिया और महाभारत की ग्यारह जिल्दें यूरोपीय जनता के सम्मुख आ गईं।

अब वह उस अद्‌भुत महाकाव्य के अठारह पर्वों को जान सकती तथा उसका महत्त्व अनुभव कर सकती थी। महाभारत को पढ़कर वह निश्चय ही भारत के गंभीर विचारकों तथा प्राचीन कवियों की महान् प्रतिभा और ज्ञान का मान करना सीखेगी।

ये हैं वे फल, उन सबके पुरुषार्थ के परिणाम, जो प्रतापचंद्र राय तथा अन्य योग्य व्यक्तियों की तरह अनवरत प्रयत्न करना जानते हैं।

वीर बालको ! क्या तुम ऐसे पुरुषों और स्त्रियों की पंक्ति में खड़े होना नहीं चाहते जो अच्छे कामों से कभी नहीं थकते और कार्य को पूरा किये बिना कभी उसे अधबीच में नहीं छोड़ते ?

इस विस्तृत संसार में करने योग्य अच्छे कार्यों का अभाव नहीं और न ही उन अच्छे व्यक्तियों का अभाव है जो उनको हाथ में ले सकते हैं; पर जिसका अभाव प्रायः होता है वह है अध्यवसाय जो अकेला ही कार्य-सिद्धि तक ले जाता है।



६

सादा जीवन

पैगम्बर मोहम्मद, जिन्होंने अपना समस्त जीवन ही अरबनिवासियों के शिक्षण और उत्थान में लगा दिया था, न तो धनी थे और न ही उनके पास सुख आराम का कोई साधन था। एक रात जब कि वे एक सख्त चटाई पर सो रहे थे तो उनकी देह पर उसकी रस्सियों और गांठों के निशान पड़ गये। एक मित्र से न रहा गया। वह बोला–"हे ईश्वर के दूत, यह शय्या आपके लिये अत्यंत कठोर है। यदि आपने मुझे आज्ञा दी होती तो मैं आपके लिये बड़ी प्रसन्नतापूर्वक एक कोमल शय्या तैयार कर देता। इससे आपका विश्राम अधिक सुखकर हो जाता।"

पैगम्बर ने उत्तर दिया–"भाई, कोमल शय्या मेरे लिये नहीं है। मुझे इस संसार में कुछ कार्य करना है। जब मेरे शरीर को विश्राम की आवश्यकता होती है तो उसे मैं वह दे देता हूं, पर उस घुड़सवार की तरह, जो अपने घोड़े को धूप की तेजी से बचाने के लिये पलभर किसी पेड़ की छाया में बांध देता है, और फिर आगे चल देता है।"

पैगम्बर का कहना था कि उन्हें संसार में कुछ कार्य करना है। इसी लिये उनका उच्च जीवन एक सादा जीवन बन गया था। अपने ध्येय में विश्वास रखते हुए वे सब अरबवासियों को शिक्षा देना चाहते थे। आमोद प्रमोद के साधनों में उनकी जरा भी आसक्ति न थी। उनका

हृदय उज्ज्वलतर विचारों की ओर झुका हुआ था।

*

निम्नलिखित अरबी कहानी से हमें पता चलेगा कि एक स्वस्थ आत्मा को कोई भी वस्तु उतना संतोष नहीं पहुंचा सकती जितना कि सादा जीवन पहुंचाता है।

मैंजूं खल्ब वंश की लड़की थी। अपने जीवन के प्रारंभिक वर्ष उसने मरुभूमि के बीच तंबू में व्यतीत किये थे।

संयोगवश उसका विवाह खलीफा म्युआविहा के साथ हो गया। खलीफा के पास बहुत धन था; दास दासियां भी प्रचुर संख्या में थे। पर वह उसके साथ रहकर प्रसन्न न थी।

चारों ओर भरपूर धन-ऐश्वर्य होने पर भी उसके मन को विश्राम नहीं था। जब कभी वह अकेली होती वह अरबी भाषा के कुछ स्वरचित पद मधुर स्वर में गाने लगती। वह गाती :—

"ऊंट की खाल से बने हुए भूरे वस्त्र मेरी आंखों में इन राजसी वस्त्रों से कहीं सुन्दर हैं।

रहने के लिये मरुभूमि का तंबू इस महल के विशाल कमरों से अधिक सुखकर है।

मुर्गी के बच्चे, जो अरब में तंबू के चारों ओर फुदकते फिरते हैं, इन पुष्ट और कीमती साज से सजे हुए खच्चरों से अधिक तेज और फुर्तीले हैं।

चौकसी पर रहनेवाले कुत्ते की आवाज, जो किसी नए आदमी को देखकर भौंक उठता है, महल के चौकीदार की हाथीदांत से बनी हुई

तुरही की आवाज से अधिक सुरीली है।"

ये पंक्तियां जब खलीफा के कान में पड़ीं तो उसने क्रोधित होकर अपनी स्त्री को महल से निकाल दिया। वह कवयित्री अपने संबंधियों के पास लौट आई। उस ऐश्वर्ययुक्त महल से दूर आकर वह प्रसन्न ही हुई, क्योंकि वह उसे हमेशा उदास कर दिया करता था।

*

प्रायः सभी देशों में अब लोग यह समझने लगे हैं कि सादा जीवन ऐसे जीवन से, जो फिजूलखर्ची, दिखावे और मिथ्याभिमान पर अवलंबित है, कहीं अधिक वांछनीय है।

अधिकाधिक संख्या में अब पुरुष और स्त्रियां बहुमूल्य वस्तुएं खरीद सकने की क्षमता रखते हुए भी यह सोचने लगे हैं कि उनके धन का और अच्छा उपयोग कैसे हो सकता है। वे बढ़िया खाने की तश्तरियों के स्थान पर स्वास्थ्यप्रद भोजन का व्यवहार पसंद करने लगे हैं। बड़े बड़े भारी चटकीले-भड़कीले सामान के स्थान पर वे अपने मकानों को हल्के, पायदार सामान से सजाना अधिक अच्छा समझते हैं, क्योंकि यह ऊपरी तड़क-भड़क सिवाय दिखावे के और किसी काम नहीं आती।

संसार की उन्नति में अपना जीवन उत्सर्ग करनेवाले श्रेष्ठ और उत्साही मनुष्य सदा ही शांति और मितव्ययता से रहना जानते हैं। ऐसा जीवन शरीर को भी स्वस्थ रखता है और मनुष्य को सर्वहित के कार्य में अधिकाधिक भाग लेने के योग्य बनाता है। ऐसे उदाहरणों से उन लोगों के सिर लज्जा से झुक जाते हैं जिन्होंने अपने चारों ओर निरर्थक चीजें जमा कर रखी हैं। और वे स्वयं भी अपने वस्त्रों,

घर की साज-सामग्री तथा अपने नौकर-चाकरों के दास के अतिरिक्त और कुछ नहीं होते।

बिना गढ़ा खोदे टीला नहीं खड़ा किया जा सकता। एक का धन-ऐश्वर्य प्रायः दूसरों की दुर्दशा का कारण होता है। इस संसार में बहुत से सुन्दर, महान् तथा उपयोगी काम करने को पड़े हैं। फिर यह कैसे संभव है कि ऐसे लोग जिनमें बुद्धि का सर्वथा अभाव नहीं है अपना समय, पैसे और विचारों को अनुपयोगी कार्यों में खर्च कर दें।

*

संत फरांस्वा (Saint François) का मुख्य काम था सत्य जीवन का प्रचार। यह काम वे धन की लालसा से नहीं करते थे। उनका अपना जीवन सादा था और उनकी सबसे बड़ी प्रसन्नता इसमें थी कि वे अपने उदाहरण और उपदेशों से लोगों को शिक्षा दें। उन्हें जो कुछ खाने को मिल जाता वे उसी में संतुष्ट रहते।

एक दिन वे और उनका एक साथी मातेओ (*Mattèo*) एक शहर के पास से गुजरे। मातेओ भिक्षा के लिये एक सड़क पर हो लिया और फरांस्वा दूसरी पर। फरांस्वा छोटे कद के तथा देखने में भी ऐसे वैसे ही थे जब कि उनका साथी ऊंचे डील-डौलवाला, प्रभावशाली और सुन्दर था। लोगों ने इसको खूब भिक्षा दी पर बेचारे फरांस्वा थोड़े से अन्न के अतिरिक्त और कुछ इकट्ठा न कर सके।

शाम को शहर के दरवाजे के बाहर दोनों मिले। पास में ही बहती नदी के किनारे एक बड़ी चट्टान पर बैठकर उन्होंने अपनी सारे दिन की कमाई पर दृष्टि डाली। फरांस्वा प्रफुल्लित मुख से बोल उठे—

"भाई मातेओ, हमें ऐसे बढ़िया भोज की आशा नहीं थी।" मातेओ ने उत्तर दिया—"रोटी के इन थोड़े से टुकड़ों में आपको भोज दिखाई दे रहा है ? न हमारे पास कोई मेज है, न छुरी, न कांटा और न ही कोई नौकर है।"

"भूख लगने पर सुन्दर चट्टान की मेज पर रखी रोटी हो और प्यास लगने पर नदी का निर्मल जल पीने के लिये हो, यह क्या दावत नहीं है ?" फरांस्वा ने उत्तर दिया।

इसका यह अर्थ नहीं कि गरीब मनुष्य सदा अपनी दीन अवस्था में ही संतोष मानकर उसी में पड़ा रहे, वरन् इससे यह प्रकट होता है कि किस प्रकार बाह्य धन और सामग्रियों के अभाव में सुन्दर आत्माओं के अंदर रहनेवाले संतोष और प्रसन्नतारूपी धन उस स्थूल धन का स्थान ले लेते हैं।

*

इसमें कोई संदेह नहीं कि सादा रहन सहन किसी भी व्यक्ति को हानि नहीं पहुंचाता। पर धन ऐश्वर्य के बाहुल्य के बारे में यह नहीं कहा जा सकता। निरर्थक चीजों का संग्रह प्रायः मनुष्य के लिये क्लेश का कारण बन जाता है।

प्रसिद्ध बादशाह अकबर के राज्यकाल में आगरे में बनारसीदास नाम के एक जैन साधु रहते थे। एक दिन बादशाह ने उन्हें अपने महल में बुलवाया और उनसे कहा—"आपको जो चाहिये मुझसे मांग लीजिये। आपके धर्मपूर्ण जीवन के फलस्वरूप आपकी सब इच्छाएं पूरी की जायंगी।"

"परब्रह्म ने मुझे आवश्यकता से अधिक दिया हुआ है", संत ने उत्तर दिया।

अकबर ने अनुरोध किया—"कुछ तो मांगिये।"

"तब राजन्, मैं यही मांगता हूं कि तुम मुझे फिर कभी अपने महल में न बुलाना। मेरा सारा समय भगवान् के कार्य के निमित्त ही है।"

"अच्छा ऐसा ही होगा, पर महाराज! अब आपसे मेरी भी एक प्रार्थना है।"

"कहो राजन्!"

"मुझे एक ऐसी सलाह दीजिये जिसको मैं सदा याद रखूं और उसपर पूरा अमल कर सकूं।"

बनारसीदास ने एक क्षण सोचकर उत्तर दिया—"इस बात का सदा ध्यान रखो कि तुम्हारा भोजन सदा शुद्ध और पवित्र हो, विशेषकर रात में मांस और पेय पदार्थ का खास ध्यान रखना।"

"मैं आपकी सलाह कभी नहीं भूलूंगा", बादशाह ने साधु को विश्वास दिलाया।

अवश्य ही वह सलाह उत्तम थी क्योंकि शुद्ध सात्त्विक भोजन और पेय पदार्थ शरीर को स्वस्थ बनाते हैं। ऐसा शरीर ही शुद्ध विचार और पवित्र जीवन का क्षेत्र बनने के योग्य हो सकता है।

जिस दिन वह साधु अकबर के पास आया था वह रोजे का दिन था। अकबर को उस दिन रात्रि के पिछले प्रहर भोजन करना था। रसोइये शाम को ही भोजन तैयार कर चुके थे। सोने चांदी के थालों में सब सामग्री परोसकर वे रोजा खुलने के समय की प्रतीक्षा में बैठे हुए थे।

अभी रात कुछ बाकी थी जब अकबर ने खाना लाने का हुक्म दिया। वह जल्दी में था फिर भी उसे एकदम बनारसीदास के वचन याद आ गये—मांस और पेय पदार्थ का खास ध्यान रखना। उसने ध्यानपूर्वक अपने सामने रखे थाल को देखा। सैकड़ों भूरी चींटियां उसपर चल रही थीं। नौकरों के बहुत सावधानी बरतने पर भी चींटियां उस भोजन पर चढ़ गई थीं और वह अब खाने के काम का नहीं रह गया था।

अकबर ने थाल वापिस भेज दिया, पर इस घटना ने उसके मन में बनारसीदास की सलाह का महत्त्व और भी अधिक बढ़ा दिया।

यह तो तुम समझ गये होगे कि बनारसीदास ने अकबर को केवल चींटियों से ही सावधान रहने के लिये नहीं कहा था, वरन् उन सब भोजनों से, जो शरीर और मन के लिये अहितकर हैं।

अपथ्य भोजन से अनेक व्याधियां उत्पन्न होती हैं।

जो लोग जानबूझकर दूषित भोज्यपदार्थ बेचते हैं उनका नागरिकों के प्रति किया गया अपराध अक्षमणीय है। केवल बासी और सड़े गले पदार्थ ही अहितकर नहीं वरन् वे सब चीजें, जिन्हें खाने से मन में या शरीर में किसी प्रकार का दोष उत्पन्न हो जाय, अवांछनीय हैं।

*

उपर्युक्त कहानी में यह नहीं कहा गया कि अकबर के प्याले में भी चींटियां थीं पर बनारसीदास ने उसे पेय पदार्थ की ओर से भी सावधान रहने के लिये कहा था।

यह सच है कि चमकते हुए प्याले आंखों को लुभावने लगते हैं; उनमेंका तरल पदार्थ भी स्वादिष्ठ और तरोताजगी देनेवाला प्रतीत

होता है पर वह होता है वास्तव में मनुष्य के लिये हानिकारक। पर इनमेंसे भी सबसे अधिक हानिकारक होते हैं सुरा-पात्र।

पैगम्बर मोहम्मद की शिक्षा थी कि मदिरापान तथा जूआ पाप हैं। इसलिये जो लोग कुरान के वचनों पर श्रद्धा रखते हैं उन्हें इन दोनों चीजों से बचना चाहिये।

पर संसार में सर्वत्र ऐसे लोग हैं जो मदिरापान को उचित समझते हैं। हम उनके मत का मान करते हैं पर ये लोग यह कभी नहीं कहते कि मदिरा न पीना भी कोई अवगुण है।

कुछ लोग मदिरापान को बुरा समझते हैं तो कुछ अच्छा भी समझते हैं पर ऐसा कोई भी नहीं है जो इसका न पीना दोष माने। इसका पीना लाभदायक है या नहीं यह बात विवादास्पद हो सकती है पर इसका न पीना हानिकारक है यह बात किसी के मुंह से नहीं निकलेगी। और यह तो प्रत्येक का विश्वास है ही कि इसके न पीने से पैसे की बचत होती है।

प्रायः सभी देशों में इससे बचने के लिये समितियां बनाई गई हैं। इनके सदस्य मदिरा न छूने की प्रतिज्ञा करते हैं। कई शहरों में तो सौदागरों को इसके बेचने तक की मनाही कर दी गई है।

इसके विपरीत कुछ स्थानों में, जहां अब तक लोग शराब को जानते भी नहीं थे, इसका व्यवहार होने लगा है। उदाहरणार्थ भारतवर्ष में, जहां शताब्दियों से इसका व्यवहार नहीं होता था, अब यह प्रचलित हो गई है। प्राचीन कथाओं में वर्णित किसी भी राक्षस से यह कम भयानक नहीं है। वे दुर्दान्त राक्षस तो केवल शरीर को ही हानि पहुंचा

सकते थे पर यह शराब तो विचारशक्ति के साथ साथ चरित्र को भी नष्ट-भ्रष्ट कर देने की शक्ति रखती है। सबसे पहले तो यह शरीर को ही हानि पहुंचाती है। जो माता पिता इसका अधिक प्रयोग करते हैं उनके बच्चों पर भी इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। यह बुद्धि का नाश करती है और जिन्होंने मनुष्यमात्र का सेवक बनना था यह उन्हें अपना दास बना लेती है। हम सबमेंसे प्रत्येक को मनुष्यमात्र का सेवक बनना चाहिये। यदि हम अपने खान पान से अपने मन और शरीर को दुर्बल बना लेंगे तो हम अयोग्य सेवक ही बन पायेंगे—ऐसे सेवक जो अपना कार्य करने में असमर्थ होंगे।

वह सिपाही क्या हुआ जिसकी बांह कट गई हो? वह नाविक किस काम का जिसकी नाव का मस्तूल खो गया हो? वह घुड़सवार, जिसका घोड़ा लंगड़ा हो गया है, क्या करेगा? और वह मनुष्य क्या होगा जिसका अपनी अमूल्य शक्तियों पर से अधिकार उठ गया है? वह पशु से भी गया बीता है। पशु भी वही खाता पीता है जो उसके लिये हितकर होता है।

रोमन कवि वरजिल (Virgil) को खेतों में रहना सहना बहुत पसंद था। पुष्ट और तगड़े बैल उन्हें विशेष प्रिय थे, क्योंकि वे खेतों में हल चलाकर उन्हें फसल के लिये तैयार करते हैं। बैल का शरीर खूब मजबूत होता है; उसके पट्ठे बड़े पुष्ट होते हैं। वर्षों लगातार कठोर काम करने का वह अभ्यासी होता है।

वरजिल कहते हैं:—

"वह शराबों और दावतों से सदा दूर रहता है। घास फूस खाता

है और बहती नदियों और निर्मल झरनों के पानी से अपनी प्यास बुझाता है। कोई चिंता उसकी सुखद नींद में व्याघात नहीं पहुंचाती।"

बलवान् होने के लिये संयमी बनो।

यदि तुम्हें कोई कहे कि दुर्बल बनो तो क्या तुम उससे रुष्ट न हो जाओगे?

खान पान का संयम जहां बलवानों की शक्ति की वृद्धि करता है वहां दुर्बलों की शक्ति की रक्षा भी करता है।

बनारसीदास की सलाह थी:

"खाने का ध्यान रखो।"

"पीने का ध्यान रखो।"



७

दूरदर्शिता

ज्यों ही उस हिन्दू युवक ने तीर छोड़ा और लक्ष्य-वेध किया त्यों ही एक बोल उठा–'वाह खूब!'

किसी ने कहा–"हां, पर अभी तो दिन का प्रकाश है। यह धनुर्धारी निशाना ठीक लगा सकता है, पर दशरथ जैसा होशियार यह नहीं है।"

–"तो फिर दशरथ क्या कर सकता है?"

–"वह शब्द-वेधी है।"

–"अर्थात्?"

–"वह शब्द के सहारे निशाना लगाता है।"

–"तुम्हारे कहने का मतलब?"

–"वह अंधेरे में तीर चला सकता है। रात में जंगल में जाकर वह आहट सुनता है। जानवर के पैरों या पंखों की आवाज से जब उसे पता चल जाता है कि उसे किस शिकार को मारना है तो वह तीर चला देता है, वह सीधा लक्ष्य को वेध देता है, मानों खुले प्रकाश में निशाना साधा हो।"

इस प्रकार अयोध्या के राजकुमार दशरथ की कीर्त्ति चारों ओर फैल गई थी।

अपनी इस शब्द-वेधी चातुरी पर उसे गर्व था। लोगों के मुंह से

अपनी प्रशंसा सुनकर वह प्रसन्न हो उठता था। सांझ होते ही वह अकेला अपने रथ में बैठकर, शिकार की खोज में, घने जंगल की ओर चल देता। कभी उसे जंगली भैंसे या नदी पर पानी पीने के लिये आने-वाले हाथी के पैरों की आवाज सुनाई देती तो कभी हरिण की हल्की या भेड़िये की सतर्क पद-ध्वनि सुनाई पड़ती।

एक दिन रात के समय जब वह झाड़ियों में लेटा हुआ पत्तियों की खड़खड़ाहट और पानी के झरझर शब्द को ध्यान से सुन रहा था, उसे अचानक तालाब के किनारे किसी के हिलने डुलने की आवाज सुनाई दी। अंधकार में उसे कुछ सूझ नहीं पड़ता था। पर दशरथ तो शब्द-वेधी था न! उसके लिये ध्वनि ही काफी थी। उसने सोचा निश्चय ही वह हाथी है। उसने तीर छोड़ा। तभी एक दर्दभरी आवाज गूंज उठी।

—"बचाओ, बचाओ! किसी ने मुझे मार डाला।" दशरथ चौंक पड़ा, उसके हाथों से धनुषबाण छूट गया। एक भयमिश्रित सिहरन उसके सारे शरीर में दौड़ गई। क्या कर दिया मैंने? जंगली जानवर के धोखे में किसी मनुष्य को घायल कर दिया? जंगल को चीरता हुआ वह तालाब की ओर झपटा। तालाब के किनारे एक युवक रक्त में लथपथ पड़ा था, बाल बिखरे थे, हाथ में उसके एक घड़ा था जो वह अभी अभी पानी से भरके चुका था।

"महाशय", वह कराह उठा, "क्या तुमने ही यह घातक बाण छोड़ा था? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था जो तुमने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया। मैं एक ऋषिकुमार हूं। मेरे वृद्ध मातापिता अंधे हैं। उनकी

देखरेख तथा उनकी सब आवश्यकताओं की पूर्त्ति मैं ही करता हूं। मैं उन्हीं के लिये पानी लेने आया था। पर अब मैं उनकी और सेवा नहीं कर सकूंगा। उस रास्ते से तुम उनकी कुटिया की ओर जाओ और जो कुछ हुआ है उनको बता दो। पर जाने से पहले मेरी छाती में से यह तीर निकालते जाओ। इससे मुझे बड़ी पीड़ा हो रही है।"

दशरथ ने घाव में से तीर खींच लिया। युवक ने अंतिम श्वास लिया और प्राण छोड़ दिये।

राजकुमार ने वह घड़ा पानी से भरा और मृतक द्वारा बताये गये रास्ते पर वह चल पड़ा। जैसे ही वह कुटिया के समीप पहुंचा, पिता बोला—

"मेरे बच्चे, आज इतनी देर क्यों लगाई? क्या वहां तालाब में स्नान करने लग गये थे? हम डर रहे थे कि कहीं तुम किसी विपत्ति में न पड़ गये हो। पर तुम उत्तर क्यों नहीं देते?"

कांपती आवाज में दशरथ बोला—

"महात्मन्, मैं तुम्हारा पुत्र नहीं हूं। मैं एक क्षत्रिय हूं। मुझे अब तक अपनी धनुर्विद्या पर बड़ा गर्व था। रात में शिकार की खोज में बैठा था। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि किनारे पर हाथी के पानी पीने की आवाज हो रही है, मैंने तीर छोड़ दिया। अफ़सोस! वह तीर तुम्हारे पुत्र के जा लगा। कहिये, कहिये, किस प्रकार मैं अपने पाप का प्रायश्चित्त करूं?"

दोनों—वृद्ध और वृद्धा—हाय हाय कर विलाप कर उठे। उन्होंने राजकुमार से उस स्थान पर उन्हें ले चलने के लिये कहा जहां उनका

एकलौता पुत्र पड़ा था। वहां जाकर उन्होंने शव के पास मंत्रों का उच्चारण किया और उसपर जल छिड़का। तब ऋषि बोले—

'सुन दशरथ ! तेरे दोष से हम आज अपने प्यारे पुत्र के लिये आंसू बहा रहे हैं। एक दिन तू भी अपने प्यारे पुत्र के लिये विलाप करेगा। बहुत वर्ष बीत जायंगे, पर यह दण्ड तुझे मिलेगा ही।'

शवदाह के लिये उन्होंने चिता तैयार की, फिर स्वयं भी उसमें बैठकर वे जल मरे।

समय बीत चला। दशरथ अयोध्या का राजा हो गया और कौशल्या से उसका विवाह हुआ। फिर उसके यशस्वी राम जैसा पुत्र उत्पन्न हुआ।

राजा की दूसरी रानी कैकेयी और उसकी दासी को छोड़ सारी प्रजा राम को प्यार करती थी। इन दोनों स्त्रियों ने षड्यंत्र रचकर सज्जन राम को बड़ी हानि पहुंचाई। इन्हीं के कुचक्र से वे चौदह वर्ष के लिये वन में भेजे गये।

तब दशरथ ने पुत्र के वियोग में उसी प्रकार विलाप किया जैसे उन वृद्ध मातापिता ने अपने युवक पुत्र के लिये जंगल में विलाप किया था जिसने आधी रात के समय तालाब के किनारे प्राण छोड़े थे।

दशरथ को अपनी विद्या पर इतना घमंड हो गया था कि उस समय उसमें वह दूरदर्शिता भी न रही जिससे वह इतना भी सोच पाता कि अंधकार में वह किसी मनुष्य को भी घायल कर सकता है। अपनी शब्द-वेधी चातुरी के लिये ऐसा मूर्खतापूर्ण घमंड होने से तो उसके लिये यही अच्छा था कि वह केवल दिन के प्रकाश में ही तीर चलाने का अभ्यास

करता। उससे किसी को कष्ट तो न पहुंचता, पर वह अदूरदर्शी था।

★

एक बार दो बूढ़े गिद्ध बड़े कष्ट की अवस्था में थे। बनारस के एक सौदागर को उनपर दया आई। वह उनको एक सूखी जगह में ले आया। आग जलाकर उसने उन्हें गर्मी पहुंचाई और मरे हुए जानवरों को जहां जलाया जाता है वहां से मांस के टुकड़े लाकर उनका उदरपोषण किया।

जब वर्षा ऋतु आई, वे गिद्ध पर्वतों की ओर उड़ गये। वे अब खूब स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट हो गये थे। बनारस के सौदागर के उपकार का बदला चुकाने के लिये उन्होंने निश्चय किया कि वे अपने दयालु मित्र को देने के लिये जहां तहां से वस्त्र इकट्ठे करेंगे। वे एक घर से दूसरे घर, एक गांव से दूसरे गांव उड़ते हुए जाते और जो वस्त्र बाहर हवा में सूखने को पड़े होते उठा लाते और उन्हें उस सौदागर के घर में छोड़ आते। सौदागर उनके सदाशय का मान तो करता था पर उन चुराये हुए कपड़ों को न तो वह अपने किसी व्यवहार में लाता और न ही उन्हें बेचता। वह उन्हें केवल एक ओर संभालकर रख देता था।

इन दो गिद्धों को पकड़ने के लिये सब स्थानों पर जाल लगाये गये। एक दिन उनमेंसे एक पकड़ा गया। वह राजा के सामने लाया गया। राजा ने उससे पूछा—"तुम मेरी प्रजा की चोरी क्यों करते हो?"

पक्षी ने उत्तर दिया—"एक सौदागर ने मेरी और मेरे भाई की जान बचाई थी। उसका ऋण चुकाने के लिये हमने कुछ वस्त्र उसके लिये इकट्ठे किये थे।"

अब सौदागर से पूछताछ की बारी आई। वह भी राजा के पास

हाजिर हुआ। वह बोला–

"स्वामी, गिद्धों ने सचमुच ही मुझे बहुत से वस्त्र लाकर दिये हैं, पर मैंने सबको एक स्थान पर रख दिया है। मैं इन्हें इनके स्वामियों को लौटाने के लिये तैयार हूं।"

राजा ने गिद्धों को क्षमा कर दिया, क्योंकि उन्होंने यह कार्य प्रत्युपकार के लिये ही किया था। हां, उनमें विचार-शक्ति का अभाव था। पर सौदागर को इसके लिये कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ा। उसमें वह दूरदृष्टि थी।

*

जापानियों के घरों में दूरदर्शिता का विचार प्रत्यक्ष मूर्त्तिमान् रूप में देखने में आता है।

उनके एक मंदिर में महात्मा बुद्ध की एक विशेष प्रकार की मूर्त्ति है। वे एक कमल के फूल पर ध्यानावस्था में बैठे हैं। उनके सामने तीन छोटे छोटे बंदर हैं। एक के हाथ अपनी आंखों पर हैं, दूसरे के दोनों कानों पर, और तीसरे ने तो हाथों से अपना मुंह ही बंद किया हुआ है। इन तीन बंदरों का अर्थ क्या तुम जानते हो? पहला अपनी चेष्टा से कह रहा है–"मैं बुरी और भद्दी चीजें नहीं देखता।" दूसरा कहता है–"मैं इनको नहीं सुनता।" और तीसरा–"मैं इनको नहीं कहता।"

इसी प्रकार बुद्धिमान् मनुष्य जो कुछ देखता, सुनता या कहता है उसमें वह बहुत सतर्क रहता है।

वह परिणाम के विषय में विचारता है, अगले दिन की बात सोचता है, और यदि उसे मार्ग न सूझे तो वह उसे किसी से पूछ लेता है।

८

सच्चाई

एक सिंह, एक भेड़िया और एक लोमड़ी शिकार करते हुए जंगल में मिले। उन्होंने एक गधा, एक हरिण और एक खरगोश, ये तीन जानवर मारे।

आखेट को सामने रख शेर ने भेड़िये से कहा:

"बताओ तो मित्र भेड़िये, इस शिकार का हिस्सा-बांट हम किस प्रकार करें?"

भेड़िये ने उत्तर दिया—"इन तीन पशुओं की काटा-कूटी करने की तनिक भी आवश्यकता नहीं। आप गधा ले लीजिये, लोमड़ी खरगोश ले लेगी और मैं तो हरिण से ही संतुष्ट हो जाऊंगा।"

इसके उत्तर में शेर ने एक क्रोधभरी गर्जना की और भेड़िये की सलाह के पुरस्कारस्वरूप पंजे की एक चोट से उसका सिर कुचल दिया। अब वह लोमड़ी की ओर मुड़ा और बोला—

"और मेरी प्यारी बहिन लोमड़ी, तुम्हारा क्या प्रस्ताव है?"

"यह तो बड़ी सीधी सी बात है श्रीमन्",—लोमड़ी एक लंबी दंडवत् करके बोली—"सवेरे का कलेवा आप गधे से कीजिये, और हरिण शाम के खाने के लिये रखिये। बाकी इस खरगोश का दोनों खानों के बीच में हल्का सा जलपान कर लीजिये।"

"बहुत ठीक", सारे का सारा शिकार अकेले अपने को मिलता देख शेर संतुष्ट होकर बोला—"भला ऐसी बुद्धिमानी और न्यायप्रियता की बातें करना तुम्हें किसने सिखाया है ?"

"भेड़िये ने"—लोमड़ी ने चतुरतापूर्वक उत्तर दिया।

लोमड़ी ने ऐसा क्यों कहा ? क्या उसने अपनी सत्य भावना व्यक्त की थी ? ना, बिल्कुल भी नहीं। तो क्या वह शेर को प्रसन्न करने की सच्ची अभिलाषा रखती थी ? यह भी नहीं। उसने तो भयवश होकर ही ऐसा कहा था। और इसके लिये निश्चय ही उसको बुरा भला नहीं कहा जा सकता। पर फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि उसका कहना सत्य नहीं था। यह केवल उसकी चालाकी थी। और शेर ने भी जो उसे पसंद किया वह इसलिये कि उसे मांस से प्रेम था, न कि सत्य से।

*

अबू अब्बास नामक एक मुसलमान लेखक ने राजा सुलेमान की कीर्त्ति-कथा लिखी है। यह राजा यहूदियों के पवित्र शहर यरुशलम पर राज्य करता था।

उसके दरबारगृह में छः सौ आसन थे। तीन सौ पर तो दरबार के सयाने लोग बैठते थे और दूसरे तीन सौ पर 'जिन' लोग। ये जिन अपनी जादू की शक्ति के द्वारा राजा को राज-काज में सहायता देते थे।

राजा के एक शब्द पर हजारों बड़े बड़े पक्षी पर फैलाये प्रकट हो जाते और इन छः सौ चौकियों पर बैठे हुए लोगों के ऊपर अपनी छाया रखते। उसके आदेशानुसार ही प्रतिदिन प्रातः और सायं एक तेज हवा

उठती जो सारे का सारा महल पलभर में इतनी दूर ले जाती जहां वैसे पहुंचने में एक मास लग जाता। इसी प्रकार राजा अपने राज्य के अंतर्गत दूर देशों पर राज्य करता था।

इसके अतिरिक्त सुलेमान ने एक ऐसा चमत्कारी सिंहासन बनवाया था कि वह किसी की कल्पना में भी नहीं आ सकता। वह सिंहासन ऐसा बना था कि जब राजा उसपर बैठा होता उसके सामने कोई व्यक्ति झूठ बोलने का साहस नहीं कर पाता था।

यह हाथीदांत का था। उसमें मोती, पन्ने और लाल जड़े थे। उसके चारों ओर चार सोने के खजूर के पेड़ थे। उनपर भी लाल और पन्ने के फल लगे थे। उन खजूर के पेड़ों में से दो की चोटी पर सोने के दो मोर बैठे थे और दो पर सोने के दो गीध। सिंहासन के दोनों ओर दो पन्नों के खंभों के बीच में दो सोने के शेर खड़े थे। खजूर के तने के चारों ओर सोने की एक अंगूर की बेल फैली थी जिसपर लालों के अंगूर लटक रहे थे।

इजराइल के बड़े बूढ़े लोग सुलेमान की दायीं ओर बैठते थे और इनकी कुर्सियां सोने की थीं। 'जिनों' का स्थान राजा की बायीं ओर था, इनकी कुर्सियां चांदी की थीं।

राजा जब अपना न्यायदरबार करता तो हर कोई उसके पास आ सकता था। जब कोई आदमी किसी दूसरे की गवाही देता और वह सत्य के यदि जरा भी इधर उधर होता तो एक आश्चर्यजनक घटना घट जाती। उसके सामने ही सिंहासन, शेर, खजूर के पेड़, मोर और गीध एकदम घूम जाते। शेर अपने पंजे आगे की ओर फेंकते और पूंछें

जमीन पर पटकने लगते, मोर और गीध अपने पर फड़फड़ाने लगते।

इससे गवाह भय से कांप उठता और जरा भी झूठ बोलने का साहस न कर पाता।

निःसंदेह यह सब राजा के लिये बड़े सुभीते का था और इससे उसका कार्य अति सुगम हो जाता था। पर भय तो सदा ही एक दुःखदायी वस्तु होता है, इसका सत्य के साथ ठीक मेल नहीं बैठता।

अबू अब्बास की कहानी के अनुसार भय मनुष्य को कभी कभी सत्य बोलने को विवश तो करता है पर उसको सत्यवादी नहीं बनाता; क्योंकि वह उसको कुछ समय के बाद असत्य बोलने को भी विवश कर सकता है जैसे कि हमारी पहली कहानी में लोमड़ी के साथ हुआ था। और ऐसा प्रायः होता है।

सत्य बोलना सीखने के लिये एक सच्चे मनुष्य को सुलेमान के सिंहासन के चमत्कार की आवश्यकता नहीं। सत्य का सिंहासन उसके अपने हृदय में होता है। उसकी आत्मा की सच्चाई ही उसे सत्य वचन कहने के लिये प्रेरित कर सकती है। वह इसलिये सत्य नहीं कहता कि उसे किसी शिक्षक, स्वामी या न्यायाधीश का डर है, वरन् इसलिये कि यही एक सच्चे मनुष्य को उचित है, यह उसके स्वभाव का एक अंग है।

यह सत्य-प्रेम ही है जो उसे सब भयों से निडर बनाता है। वह वही कहता है जो उसे कहना चाहिये, चाहे जो भी कष्ट भविष्य में उसे इसके लिये उठाना पड़े।

*

सच्चाई

विश्वामित्र नामक एक धनी और शक्तिशाली राजा ने विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिये तपस्या करने का निश्चय किया। वह अपनी क्षत्रियजाति से सर्वोच्च ब्राह्मणजाति में प्रवेश पाना चाहता था। इसके लिये उसने जो आवश्यक समझा सब किया और वह ऐसी कड़ी तपस्या के जीवन का अनुसरण करने लगा कि सबके मुंह पर यही था "राजा ब्राह्मण होने के सर्वथा योग्य है।"

पर ब्राह्मण वशिष्ठ ऐसा नहीं समझते थे, क्योंकि वे जानते थे कि विश्वामित्र अभिमानवश यह कर्म कर रहा है। उसका त्याग सच्चा त्याग नहीं है। इसलिये उसे ब्राह्मण मानकर उसको प्रणाम करना वशिष्ठ ने अस्वीकार कर दिया।

राजा ने क्रोधवश वशिष्ठ के कुटुम्ब के एक सौ बालक मरवा दिये। इतना दुःख शोक होने पर भी वे इस बात पर दृढ़ रहे कि जो उनके विचार में सत्य नहीं है वह वे कभी न कहेंगे।

अब राजा ने उस सत्यवादी मनुष्य को भी मार देने का निश्चय किया। एक दिन सायंकाल वह इस दुष्ट कर्म को करने के लिये वशिष्ठ की कुटिया की ओर चला।

द्वार के निकट पहुंचकर उसने वशिष्ठ को अंदर किसी मित्र से बातें करते सुना। उसके कान में जब उसका अपना नाम पड़ा तो वह सुनने के लिये वहीं ठिठक गया। जो वचन उसने सुने वे शुद्ध और पवित्र होने के साथ ही क्षमा से परिपूर्ण थे। पश्चात्ताप से भरकर उसने अपना अस्त्र वहीं फेंक दिया और वह अंदर जाकर ऋषि के चरणों में झुक गया।

राजा की ऐसी मानसिक अवस्था देख वशिष्ठ ने उसका प्रेमपूर्वक स्वागत किया और कहा—"ब्रह्मर्षि !" राजा ने नम्रतापूर्वक पूछा—"इससे पहले आपने मेरी तपस्या का आदर क्यों नहीं किया ?"

"क्योंकि तब तुम अपनी शक्ति के मद से ब्राह्मणपद की मांग करते थे, परंतु अब तुम्हें पश्चात्ताप हो रहा है और इसलिये तुम ब्राह्मण की सच्ची वृत्ति में आ गये हो", वशिष्ठ ने उत्तर दिया।

वशिष्ठ निर्भयतापूर्वक और बिना किसी प्रतिशोध की भावना के सत्य बोलना जानते थे।

*

क्या तुम्हें ऐसा प्रतीत नहीं होता कि इस प्रकार का सत्य बोलना कितना सुन्दर है, चाहे वैसा करने में विपत्ति भी उठानी पड़े ?

और प्रायः ऐसा देखा भी जाता है कि जो लोग इस प्रकार की विपत्ति का सामना करते हैं उनके लिये अंत में सब बातें भली हो जाती हैं, चाहे आरंभ में वे वैसी न भी प्रतीत होती हों। असत्य की सफलता सदा अस्थायी होती है। बल्कि अधिकतर तो सत्य कहना ही चतुर बनने का सबसे बढ़िया तरीका है।

एक दिन प्रातःकाल के समय देहली का बादशाह योग्य व्यक्तियों को पदवियां और खिलअतें बांटने के लिये सिंहासन पर बैठा था। जब उत्सव समाप्त होने को आया तो उसने देखा कि जिन व्यक्तियों को उसने बुलाया था उनमेंसे सैयद अहमद नामक एक युवक अभी तक नहीं पहुंचा है।

बादशाह पालकी में सवार होने के लिये अपने सिंहासन पर से उठा।

इसमें बैठकर वह अपने बड़े महल के एक भाग से दूसरे भाग को जाया करता था।

ठीक उसी समय उस युवक ने उतावली से प्रवेश किया।

"तुम्हारा पुत्र देर से पहुंचा है", बादशाह ने सैयद के पिता से–जो उसका मित्र था–कहा, और स्वयं युवक की ओर कड़ी दृष्टि से देखकर प्रश्न किया–"यह देर क्यों हुई ?"

"बादशाह सलामत"–सैयद ने सच्चाई से कहा, "मैं आज बहुत देर तक सोता रहा।"

दरबारीगण स्तंभित हो युवक की ओर ताकने लगे। किस ढिठाई से यह बादशाह के सामने बात कर रहा है ! यह कोई उचित बहाना भी तो नहीं है ! इस प्रकार बोलने से उसे न जाने कौनसी विपत्ति उठानी पड़ेगी !

पर हुआ इसके विपरीत। बादशाह एक क्षण तो सोचता रहा फिर उसने युवक की उसकी सत्यवादिता के लिये प्रशंसा की और उसके साहस के लिये उसे मोतियों की माला और आभूषण प्रदान किये।

इस प्रकार सैयद अहमद को, जो सत्य से प्रेम करता था और बादशाह हो चाहे किसान सबसे सच कहता था, यह प्रतिफल मिला।

*

यह तो निश्चित है कि बिना किसी कष्ट के सत्य बोल सकने के लिये सबसे अच्छा यह है कि हम सदा इस प्रकार का कर्म करें कि अपने किसी भी कार्य को हमें छुपाना न पड़े। इसके लिये प्रतिक्षण हमें यह याद रखना चाहिये कि हम भगवान् के सम्मुख हैं। क्योंकि वचन की सच्चाई

कार्य की सच्चाई की मांग करती है। सच्चा मनुष्य वह है जो अपने वचन और कर्म से सब पाखंड को निकाल देता है।

शहर 'अमरोहे' में एक विशेष प्रकार का बर्तन बनता है जिसको 'कागजी' कहते हैं। इसपर रुपहले काम की सजावट होती है। ये बर्तन होते तो बड़े सुन्दर हैं परंतु इतने हल्के-फुल्के और बोदे होते हैं कि जरा से प्रयोग से ही चट टूट जाते हैं। फिर भी देखने में वे बड़े उपयोगी मालूम देते हैं; पर उनको देखकर ही मन को संतुष्ट कर लेना चाहिये।

बहुतसे व्यक्ति इन कागजी बर्तनों के समान होते हैं। उनका स्वरूप सुन्दर होता है, पर यदि तुम उनको किसी भी बात में कसौटी पर कसने का प्रयत्न करो तो तुम्हें पता लगेगा कि उनके अंदर दिखावे के अतिरिक्त कहीं कुछ नहीं है। उनपर तनिक भी भरोसा न रखो क्योंकि उनकी दुर्बलता के लिये वह बहुत भारी बोझ है।

एक ब्राह्मण ने एक बार अपने पुत्र को बनारस में किसी पण्डित से विद्या पढ़ने के लिये भेजा।

बारह वर्ष के बाद वह युवक अपने शहर को वापिस लौटा। बहुत से लोग यह सोचकर कि अब वह एक बड़ा विद्वान् पण्डित हो गया है भागे भागे उसके घर उससे मिलने के लिये आये। उन्होंने उसके सामने संस्कृतभाषा की एक पुस्तक रखी और उससे कहा—"पूज्य पण्डितजी, इसमें जो ज्ञान भरा है वह हमें बताइये।"

युवक स्थिर दृष्टि से उस पुस्तक की ओर देखता रहा। वास्तव में वह तो उसका एक शब्द भी न समझ पा रहा था। बनारस में उसने सिवाय अक्षरज्ञान के और कुछ भी न सीखा था। वे अक्षर भी उसके

मस्तिष्क में इसलिये धीरे धीरे प्रवेश पा गये थे क्योंकि वहां वे खूब बड़े बड़े आकार में श्याम-पट पर लिखे रहते थे और वह उन्हें प्रतिदिन देखा करता था।

सो वह चुपचाप पुस्तक के सामने बैठा रहा। उसकी आंखों से ऐसा प्रतीत होने लगा कि बस अब वे बरसने ही वाली हैं।

आगतों ने कहा—"पण्डितजी, अवश्य इस पुस्तक की किसी चीज ने ही आपके हृदय को इतना द्रवित किया है। जो कुछ है, आप हमें भी बताइये।"

"ये अक्षर बनारस में तो बड़े होते थे, परंतु यहां ये छोटे हैं"—अंत में वह बोला।

क्या यह पण्डित उस कागजी बर्तन के सदृश नहीं था ?

*

एक भेड़िया गंगा नदी के किनारे चट्टानों पर रहता था। पर्वतों पर बर्फ पिघलने से नदी में बाढ़ आ गई। एक दिन पानी इतना ऊंचा उठा कि उसने उस चट्टान को चारों ओर से घेर लिया। उस दिन भेड़िया अपने भोजन की तलाश में न जा सका। यह देखकर कि आज उसके पास खाने को कुछ भी नहीं है उसने कहा—"अच्छा तो है, आज पवित्र दिन भी है। आज मैं इसके उपलक्ष्य में व्रत रखूंगा।"

वह चट्टान के एक किनारे बैठ गया और व्रत का पवित्र दिन मनाने के लिये उसने अपनी आकृति खूब गंभीर बना ली।

पर उसी समय क्या हुआ कि एक जंगली बकरी पानी के ऊपर से एक चट्टान से दूसरी चट्टान पर कूदती हुई उसी स्थान पर आ पहुंची

जहां भेड़िया खूब भक्तिभाव में बैठा था।

ज्यों ही भेड़िये ने उसे देखा वह एकदम चिल्ला उठा–"ओह, यह रहा कुछ खाने को!"

वह बकरी पर झपटा, पर चूक गया। दुबारा झपटा, दुबारा भी वह निकल गई। अंत में बकरी तेज बहती हुई धारा को पार करके पूरी तरह से भेड़िये की पहुंच से दूर चली गई।

"बहुत खूब!" भेड़िये ने अपना साधुभाव फिर से धारण करते हुए कहा –"मैं आज व्रत के पवित्र दिन बकरी का मांस खाकर अपवित्र नहीं हूंगा। ना, ना, आज व्रत के दिन मांस! कदापि नहीं।"

उस भेड़िये, उसकी भक्ति और व्रत और उसकी श्रद्धा के बारे में तुम्हारा क्या विचार है? तुम उसके कपट पर हंसते हो। पर कितने ही लोग ऐसे हैं जिनकी सच्चाई भेड़िये की सच्चाई जैसी है, जो सुन्दर भावनाओं की डींगें मारते हैं, क्योंकि उसमें उनका स्वार्थ होता है। वे छोटे छोटे भक्तिभाव के काम करते हैं, क्योंकि वे अपनी बुराइयों को प्रकाश्य रूप में कर सकने के लिये स्वतंत्र नहीं होते। पर इस सब चालाकी के होते हुए भी क्या तुम सोचते हो कि ये कपटी उन लोगों के सामने जो सच्चे और न्यायी हैं अधिक देर तक टिक सकते हैं?

*

हनुमान् की सेना के बंदरों और रीछों ने राम और उनके भाई लक्ष्मण के लिये दस शीशवाले राक्षस रावण के साथ युद्ध किया था।

सैनिकगण चारों ओर से उसपर आक्रमण कर रहे थे। उनकी चोटों से बचने में अपने को अशक्त पाकर रावण ने अपनी जादू की शक्ति का

प्रयोग किया।

एकदम, जादू के बल से, उसके चारों ओर, राक्षसों के बीच में, बहुत से राम और लक्ष्मण उत्पन्न हो गये। यह, वास्तव में, केवल एक धोखा और इन्द्रजाल था। परंतु बंदरों और रीछों ने उनको सचमुच के मनुष्य समझा और एकदम युद्ध बंद कर दिया। अब कैसे वे युद्ध को जारी रखते और अपने प्रिय स्वामी राम और लक्ष्मण के ऊपर पत्थर बरसाते। उनको ऐसा चिंतित देखकर रावण एक क्रूर हंसी हंसा। राम को भी हंसी आ गई। इस प्रकार के झूठ को छिन्नभिन्न करने, इस धोखाधड़ी को व्यर्थ करने और सत्य को विजय देने में उनको कितनी प्रसन्नता हुई होगी! उन्होंने अपने शक्तिशाली धनुष पर एक बाण चढ़ाया और छोड़ दिया। बाण का उन सब धोखे की छाया-मूर्त्तियों में से सर सर करते हुए निकलना था कि वे सब अलोप हो गईं। सब साफ देखकर हनुमान् की सेना को फिर से साहस आ गया।

सत्यवादी मनुष्य के सत्य वचन भी इसी तीर के समान होते हैं जो बहुत से झूठ और धोखे को नष्ट करने की शक्ति रखते हैं।

*

दक्षिण भारत की एक प्राचीन कथा है। एक 'राजाबेला' नामक राजा के बारे में प्रसिद्ध था कि केवल उसकी हंसी मीलों दूर देश को बेले फूल की मीठी सुगंध से भर देती थी। पर इसके लिये उस हंसी को उसके हृदय की आनंदमयी और स्वाभाविक प्रफुल्लता से निकलना जरूरी था। यदि वह बिना सच्ची प्रफुल्लता से हंसने का प्रयत्न करता तो उसका वह फल कभी भी न होता। क्योंकि उसका मन

प्रसन्न रहता था, उसकी हंसी मानों एक सुगंधित स्रोत से फूटी पड़ती थी।

इस हंसी का गुण तो पूर्णतया उसकी सच्चाई में था।

राजा दुर्योधन के महल में भोजनादि का खूब राजसी ठाट-बाट था। सोने चांदी के बर्तन थे—लाल, पन्ने और जगमगाते हीरे जड़े। श्रीकृष्ण को भोजन के लिये निमंत्रण मिला पर वे गये नहीं। वे उसी सायं एक गरीब शूद्र के घर भोजन पाने चले गये। उसने भी उन्हें आमंत्रित किया हुआ था। वहां भोजन था सादा और बर्तन भी अति साधारण। पर कृष्ण ने एक को छोड़कर दूसरे को चुना, क्योंकि शूद्र का अर्पित किया हुआ भोजन सच्चे प्रेम से ओतप्रोत था जब कि राजा दुर्योधन के राजसी भोज का आयोजन खाली दिखावे के लिये किया गया था।

एक कहानी और भी है कि प्रतापी राम ने एक अति तुच्छ, चिड़िया-मार की स्त्री के यहां भोजन किया था। वह केवल उनके आगे कुछ फल ही रख सकी थी, क्योंकि उसके पास और कुछ था ही नहीं। पर उसके पास जो सबसे बढ़िया चीज थी वही उसने स्वच्छ हृदय से उनको दी। इससे राम का हृदय आकर्षित हो गया और उन्होंने यह इच्छा की कि सच्चे हृदय द्वारा दी गई इस भेंट की स्मृति नष्ट नहीं होनी चाहिये। आज भी—कई शताब्दियों के बाद—लोग इसका वर्णन इसी लिये करते हैं।

जलाल एक बुद्धिमान् और प्रसिद्ध उपदेशक था। एक दिन दो तुर्क कुछ भेंट लेकर उसके पास आये। वे उससे उपदेश सुनने की इच्छा

रखते थे"। क्योंकि वे बहुत गरीब थे, उनकी भेंट भी साधारण थी–केवल दाल की एक मुट्ठी। जलाल के कुछ शिष्यों ने उस भेंट की ओर अवज्ञा की दृष्टि से देखा। तब जलाल ने कहा–

"पैगम्बर मोहम्मद को एक बार अपने बहुत से कार्यों में से किसी एक को ठीक प्रकार चलाने के लिये धन की आवश्यकता पड़ी। उन्होंने अपने शिष्यों से मांग की कि जो कुछ वे दे सकते हों दें। कुछ ने जो कुछ उनके पास था उसका आधा भाग दिया और कुछ ने तीसरा। अबू बकर ने अपना सारा धन उनको दे दिया। मोहम्मद को इस प्रकार बहुत से अस्त्र-शस्त्र और पशु आदि मिल गये। अंत में एक गरीब स्त्री आई। उसने अपनी बारी पर तीन खजूरें और गेहूं की एक रोटी भेंट में दी। उसके पास बस जो कुछ था यही था। यह देखकर बहुत से लोग हंस पड़े। पर पैगम्बर ने उन्हें अपना एक स्वप्न सुनाया जिसमें कुछ स्वर्ग-दूत एक तराजू लाये थे और उन्होंने एक पलड़े में उन सबकी भेंटें रखीं और दूसरे में केवल उस गरीब स्त्री की तीन खजूरें और रोटी। तराजू स्थिर रही क्योंकि यह पलड़ा भी उतना ही भारी निकला जितना पहला।" जलाल ने आगे समझाया –

"एक मामूली भेंट यदि वह सच्चे हृदय से दी गई है तो उसका उतना ही मूल्य है जितना कि किसी मूल्यवान् भेंट का।"

यह सुनकर दोनों तुर्क बड़े प्रसन्न हुए और फिर किसी को भी उस दाल की मुट्ठी पर हंसने का साहस नहीं हुआ।

*

छोटी जाति का एक गरीब मनुष्य एक बार अपने कुटुम्ब की पालना

करने के लिये सारा दिन शिकार ढूंढ़ता रहा, पर उसके कुछ हाथ न लगा। रात हो गई पर वह अभी जंगल में ही था–अकेला, भूखा-प्यासा और अपने असफल प्रयत्नों से थका हुआ। इस आशा में कि कहीं उसे कोई घोंसला ही मिल जाय वह एक बेल के पेड़ पर चढ़ गया। इस पेड़ के तेहरे पत्ते भक्तों द्वारा शिवजी को चढ़ाये जाते हैं। पर उसे वहां कोई घोंसला न मिला। उसे अपनी स्त्री का विचार आया, फिर बच्चों का आया जो उसकी तथा भोजन की आशा में बैठे होंगे। वह रोने लगा। कहानी में आगे आता है कि करुणा के आंसुओं में बड़ा बल होता है। ये उन आंसुओं से जो अपने निज के दुःख के लिये बहाये जाते हैं, अधिक कीमती होते हैं।

शिकारी के आंसू बेल-वृक्ष के पत्तों पर गिरे और उनको लेकर वे वृक्ष के तने के पास पृथ्वी पर रखे शिवलिंग पर जा पड़े। तभी एक सांप ने उस मनुष्य को डस लिया जिससे वह वहीं मर गया। दूतगण उसी समय उसकी आत्मा को देवलोक में ले गये और शिवजी के आगे उसे उपस्थित कर दिया।

स्वर्ग के देवता एक स्वर में बोल उठे–"यहां इस मनुष्य की आत्मा के लिये कोई स्थान नहीं। यह नीच जाति का है; इसने व्रत नियमों की उपेक्षा की है; अपवित्र खाद्य खाया है और देवताओं पर जो सदा से चढ़ावे चढ़ाये जाते हैं वे भी इसने नहीं चढ़ाये हैं।"

पर शिवजी ने उनसे कहा–"इसने मुझपर बेल की पत्तियां चढ़ाई हैं, विशेषकर इसने तो अपने सच्चे आंसू मुझे अर्पित किये हैं। सच्चे हृदय की नीच जाति नहीं होती।" और उन्होंने उसे अपने स्वर्ग में

अंगीकार कर लिया।

*

ये सब कथाएं हमें बताती हैं कि सब देशों में और सब काल में मनुष्य और उनके देवता सब सच्चाई का मान करते हैं। वे सब वस्तुओं में स्थित सत्य और सरलता से प्रेम करते हैं।

जिसका निवास असत्य में है वह मनुष्यजाति का शत्रु है।

सब मानवविषयक विज्ञान तथा दर्शन, खगोलविद्या, गणित, रसायन-विद्या और भौतिक विज्ञान सत्य की खोज करते हैं। पर छोटी छोटी बातों में भी सत्य की उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि बड़ी में है।

छोटे बालको, सत्यवादी बनना सीखने के लिये बड़े होने की प्रतीक्षा में मत रहो। सत्यवादी बनने और सत्य में स्थिर रहने का अभ्यास डालने के लिये कोई भी समय अति शीघ्रता का नहीं है।

इसी लिये सत्य बोलने की इच्छा रखते हुए भी कभी कभी मनुष्य को इसका बोलना इतना कठिन हो जाता है। इसके लिये सबसे प्रथम तो मनुष्य को सत्य को समझना और उसको ढूंढ़ना चाहिये। और यह सदा इतना सरल नहीं होता।

बनारस के राजा के चार युवक पुत्र थे। प्रत्येक ने अपने पिता के रथवान् से कहा—"मैं 'किंशुक' का पेड़ देखना चाहता हूं।"

सारथि ने उत्तर दिया—"मैं तुम्हें दिखाऊंगा।" और सबसे बड़े को उसने अपने साथ घूमने चलने को कहा।

जंगल में उसने राजकुमार को किंशुक का पेड़ दिखाया। उस समय वह ऋतु थी जब कि उसपर कोंपल, पत्ते, फूल कुछ न था। इसलिये

राजकुमार ने केवल एक रूखी-सूखी लकड़ी का तना ही देखा।

उसके कुछ सप्ताह बाद दूसरा राजकुमार रथ में घूमने के लिये गया। उसने भी किंशुक देखा। उसने उसको पत्तों से लदा पाया।

उसी ऋतु में कुछ और दिन बाद तीसरे की बारी आई। उसने देखा कि वह फूलों से लाल हो रहा है।

सबसे अंत में चौथे ने पेड़ को देखा। उसके फल अब पक चुके थे।

एक दिन जब चारों भाई फिर इकट्ठे हुए, एक ने पूछा—

"किंशुक का पेड़ कैसा है?"

सबसे बड़े ने कहा—"एक नंगे तने के समान।"

दूसरा बोला—"फले फूले केले के पेड़ के समान।"

तीसरा—"लाल-गुलाबी फूलों के गुलदस्ते के समान।"

और चौथा—"वह तो एक प्रकार का बबूल का पेड़ प्रतीत होता है जिसमें फल भी होता है।"

जब चारों का मत मिलता न दिखाई दिया तो वे इकट्ठे होकर फैसला कराने के लिये अपने पिता के पास गये। जब राजा ने सुना कि किस प्रकार एक के बाद एक ने किंशुक का पेड़ देखा तो वह मुस्करा पड़ा। तब उसने उनसे कहा—

"तुम चारों ठीक कहते हो, पर तुम चारों ही भूल गये हो कि पेड़ सब ऋतुओं में एकसा नहीं रहता।"

प्रत्येक ने वही कहा जो उसने देखा और प्रत्येक ही ने जो दूसरे जानते थे उसको मानना अस्वीकार किया।

इस प्रकार लोग प्रायः सत्य का एक छोटा सा अंश ही जानते हैं और

उनकी गलती बस यही होती है कि वे समझते हैं कि वह उसे पूरे का पूरा जानते हैं।

यह गलती कितनी कम हो जाती यदि वे बचपन में ही सत्य की अधिकाधिक खोज करने के लिये उससे उचित प्रेम करना सीख जाते।

*

हिमालय के पर्वतीय प्रदेश के कुमायूं नामक स्थान का राजा एक बार अल्मोड़े की घाटी में शिकार खेलने गया। उस समय वह स्थान घने जंगल से ढका था।

एक खरगोश झाड़ियों में से निकला। राजा ने उसका पीछा किया। अचानक क्या हुआ कि वह खरगोश चीते में बदल गया और शीघ्र ही दृष्टि से ओझल हो गया।

उस आश्चर्यजनक घटना से स्तंभित हुए राजा ने बुद्धिमानों की एक सभा बुलाई और उनसे इसका अर्थ पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया—"इसका यह अर्थ है कि जिस स्थान पर चीता दृष्टि से ओझल हुआ था वहां आपको एक नया शहर बसाना चाहिये क्योंकि चीते केवल उसी स्थान से भाग जाते हैं जहां मनुष्यों को एक बड़ी संख्या में बसना हो।"

सो नया शहर बसाने के लिये मजदूर लोग वहां काम पर लगा दिये गये। अंत में एक स्थान पर जमीन की कड़ाई देखने के लिये उन्होंने लोहे की एक मोटी कीली गाड़ी। उस समय अचानक पृथ्वी थोड़ी हिल उठी।

"ठहरो", बुद्धिमान् लोग चिल्ला पड़े—"इसकी नोक सर्पराज शेष-

नाग की देह में धंस गई है। इस स्थान पर अब शहर नहीं बन सकता।"

अंत में उस कहानी में भी कहा गया है कि जब वह लोहे की कीली पृथ्वी से बाहर निकाली गई तो वह सारी शेषनाग के रक्त से लाल हो रही थी।

"यह तो बड़े दुःख की बात है", राजा बोला—"पर क्योंकि हम यह निश्चय कर चुके हैं कि यहां शहर बनाना है, सो अब तो बनाना ही पड़ेगा।"

उन पण्डितों ने क्रोध में भरकर भविष्यवाणी की कि शहर पर कोई भारी विपत्ति आयेगी और राजा का अपना वंश भी शीघ्र ही नष्ट भ्रष्ट हो जायगा।

जमीन वहां की उपजाऊ थी और पानी भी खूब था। छः सौ साल से अल्मोड़ा शहर उस पहाड़ पर बसा हुआ है। और उसके चारों तरफ फैले खेत बढ़िया फसलें पैदा करते हैं।

इस प्रकार बुद्धि रखते हुए भी वे पण्डित अपनी भविष्यवाणी में गलत निकले। निःसंदेह वे सच्चे थे और उनको विश्वास था कि वे सत्य ही कह रहे हैं। प्रायः लोग ऐसी गलती करते हैं और उसको वास्तविकता समझ लेते हैं जो होता केवल अंधविश्वास है।

नन्हे बालको, संसार अंधविश्वासों से भरा पड़ा है। अधिक से अधिक, सत्य को ढूंढ़ने के लिये सबसे अच्छा तरीका जो मनुष्यों को मिल सकता है यह है कि वे सदा अपने विचारों, कार्यों और वचनों में अधिकाधिक निष्कपट रहें, क्योंकि दूसरों को सब बातों में धोखा

सच्चाई

देना छोड़कर ही मनुष्य अपने आपको कम से कम धोखा देना सीखता है।



९

ठीक जांच सकना

एक बिल्कुल सीधी छड़ी लो, उसका आधा भाग पानी में डुबो दो। छड़ी तुम्हें बीच में से टेढ़ी दिखाई पड़ेगी, पर उसका यह रूप झूठा है; और यदि तुम यह सोचो कि छड़ी वास्तव में टेढ़ी हो गई तो तुम्हारा विचार गलत होगा। छड़ी को पानी में से बाहर निकालो, तुम देखोगे कि वह पहले की भांति ही सीधी है।

इसके विपरीत, यह भी संभव है कि एक टेढ़ी छड़ी को इस तरीके से पानी में खड़ा किया जाय कि वह सीधी प्रतीत होने लगे।

कई मनुष्य भी इन छड़ियों के समान होते हैं। कुछ तो होते हैं सच्चे पर वे वैसे प्रतीत नहीं होते; कुछ लगते सच्चे हैं परंतु वे होते हैं छलिया —ऐसा मायावी रूप वे धारण कर लेते हैं। इसलिये बाह्य रूप का हमें कम से कम विश्वास करना चाहिये, साथ ही किसी व्यक्ति के बारे में मत स्थिर करने में खूब होशियारी बरतने की जरूरत होती है।

भारतवर्ष में एक साधु एक बार भिक्षा मांगता मांगता एक देश में से गुजरा। एक चरागाह में उसे एक मेढ़ा दिखाई पड़ा। जानवर उस समय क्रोध में था। उसने साधु पर झपटने की तैयारी की और वह सिर नीचे कर कुछ कदम पीछे हटा।

"वाह!" वह धर्माभिमानी साधु बोल उठा, "कैसा होशियार

और भला है यह जानवर ! इसे पता है कि मैं एक गुणी व्यक्ति हूं। मुझे प्रणाम करने के लिये ही तो इसने मेरे सामने सिर झुकाया है।

ठीक उसी समय मेढ़ा उसपर कूद पड़ा और अपने सिर की एक ठोकर से उस गुणवान् व्यक्ति को जमीन पर दे पटका।

जो अनधिकारी है उसके प्रति विश्वास और सम्मान दिखाने से यही दशा होती है। कुछ लोग होते भयंकर हैं परंतु दिखाई निर्दोष देते हैं, जैसे कि वह कहानी का भेड़िया जिसने चरवाहे का लबादा पहन लिया था और भेड़ें उसे अपना स्वामी समझ बैठी थीं। इसके विपरीत कुछ दिखते भयंकर हैं पर होते नहीं, जैसे एक और कहानी का गदहा जिसने शेर की खाल ओढ़ ली थी और वह भयानक प्रतीत होने लगा था।

★

जहां मनुष्य दूसरों के बाह्य रूप में विश्वास करने की गलती कर सकता है, वहां, इसके विपरीत, वह दूसरों के बारे में अनुदार और उतावला मत बनाने के प्रलोभन में भी पड़ सकता है।

फारिस का शाह इस्माइल सफवी खुरासान का राज्य जीतकर अपनी राजधानी को वापिस लौट रहा था। जब वह कवि हातिफी के निवासस्थान के पास से गुजरा तो उसके मन में कवि से मिलने की इच्छा हो आई। उस प्रसिद्ध व्यक्ति को देखने की उसकी इच्छा इतनी प्रबल हो उठी कि उसमें इतना धैर्य भी नहीं रहा कि वह मकान के सिंह-द्वार तक पहुंच सके। उसकी दृष्टि अहाते की दीवार के बाहर एक पेड़ की लटकती हुई शाखा पर पड़ी। वह उसके सहारे झूल गया और

दीवार को फांदता हुआ कवि के बगीचे में जा कूदा।

यदि इसी प्रकार सहसा कोई तुम्हारे मकान में घुस आये तो तुम क्या सोचोगे? निश्चय ही, तुम उसे चोर समझोगे और उसके साथ वैसे ही पेश आओगे।

पर हातिफी ने यह अच्छा किया कि उसने घटना के बाह्य स्वरूप को देखकर और अपने सर्वप्रथम विचार के अनुसार ही अपना मत स्थिर नहीं कर लिया। उसने अपने अनोखे अतिथि की खूब आव-भगत की और कुछ दिनों बाद तो इस घटना पर उसने एक कविता लिखी कि ।कस प्रकार शाह के मन में उससे मिलने की ऐसी उत्सुकता हो उठी थी।

★

साधारणतया दूसरों के अवगुण देखना अधिक आसान होता है। प्रत्येक मनुष्य में कोई न कोई दोष होता ही है और अपनी अपेक्षा दूसरे लोग उसे जल्दी जान लेते हैं। परंतु यदि हम दूसरों के प्रति कम से कम अन्याय करना चाहें तो हमें उनके सर्वोत्तम गुण को देखने का यत्न करना चाहिये। एक लोकोक्ति है–

"यदि तुम्हारा मित्र काना है तो उसके मुंह को एक ओर से देखो।"

तुम्हारे जो सहपाठी तुम्हें फूहड़ और सुस्त प्रतीत होते हैं वे ही, वास्तव में, सबसे अधिक परिश्रमी हो सकते हैं।

तुम्हारे जो अध्यापक तुम्हें अनुशासनप्रिय और कठोर मालूम देते हैं वे, निश्चय ही, तुमसे प्रेम करते हैं और केवल तुम्हारी उन्नति की ही इच्छा है उन्हें।

वह मित्र जो तुम्हें अरुचिकर और गंवार दिखाई पड़ता है

तुम्हारा सबसे अधिक हितैषी हो सकता है।

कई ऐसे व्यक्ति होते हैं जिन्हें हम दुष्ट समझकर प्रेम नहीं करते। इनके भीतर भी कोई न कोई ऐसा गुण होता है जिसको हम नहीं देख पाते।

आगोबीओ नाम के शहर के आस पास के खेतों और जंगलों में एक विशालकाय भेड़िये का इतना आतंक छाया हुआ था कि वहां कोई रास्ता चलने का साहस नहीं करता था। यह अनेक मनुष्यों और पशुओं का सफाया कर चुका था।

अंत में भद्र-प्रकृति संत फ्रांस्वा ने उस भयानक जानवर का सामना करने का निश्चय किया। वे शहर से बाहर निकले। उनके पीछे पुरुषों और स्त्रियों की एक बड़ी भीड़ थी। ज्यों ही वे जंगल के समीप पहुंचे, त्यों ही भेड़िया मुंह फाड़े संत की ओर लपका। परंतु फ्रांस्वा ने शांतिपूर्वक कुछ इशारा किया और भेड़िया ठंडा होकर उनके पैरों के पास ऐसे लोट गया मानों भेड़ का कोई बच्चा हो।

"भाई भेड़िये", संत फ्रांस्वा ने कहा, "तूने इस देश को बहुत हानि पहुंचाई है। जो दण्ड हत्यारों को मिलना चाहिये तू उसी दण्ड का अधिकारी है और सब लोग तुझसे घृणा करते हैं। परंतु यदि तेरे और आगोबीओ के मेरे इन मित्रों के बीच में मैत्री स्थापित हो जाय तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।"

भेड़िये ने अपना सिर झुका लिया और वह अपनी पूंछ हिलाने लगा।

संत फ्रांस्वा ने और कहा—"भाई भेड़िये, मैं तुझसे प्रतिज्ञा करता हूं कि यदि तू इन लोगों के साथ शांतिपूर्वक रहना स्वीकार करे तो ये

तेरे साथ अच्छा बर्ताव करेंगे और तुझको प्रतिदिन खाना भी देंगे। क्या तू भी यह प्रतिज्ञा करता है कि आज से तू इनको कोई हानि नहीं पहुंचायेगा ?"

अब तो भेड़िये ने अपना सिर पूरी तरह से झुका लिया और अपना दायां पंजा संत के हाथ में रख दिया। इस प्रकार सच्चे दिल से दोनों में संधि स्थापित हो गई।

तब फ्रांस्वा भेड़िये को आगोबीओ के विशाल राजमहल की ओर ले चले। वहां नागरिकों की एक भारी भीड़ के सामने उन्होंने उक्त वचन फिर दुहराये। और उसने भी फिर से अपना पंजा संत के हाथ में धर दिया जिसका अर्थ था कि वह भविष्य में अच्छे आचरण की प्रतिज्ञा करता है।

वह भेड़िया उस नगर में दो वर्ष तक रहा और उसने इस बीच में किसी को कोई हानि नहीं पहुंचाई। नगरवासी उसके लिये प्रतिदिन भोजन लाते थे। जब उसकी मृत्यु हुई तो सबको दुःख हुआ।

वह भेड़िया कितना भी बुरा क्यों न प्रतीत होता था पर उसके अंदर एक ऐसी चीज थी जिसको, वास्तव में, तब तक किसी व्यक्ति ने नहीं जाना जब तक संत फ्रांस्वा ने उसे 'भाई' कहकर संबोधित नहीं किया। इस कहानी में भेड़िया निःसंदेह एक बड़े अपराधी का दृष्टांत उपस्थित करता है जिससे सब लोग घृणा करते हैं। परंतु यह हमें बताती है कि उन लोगों में भी, जिनसे किसी को कोई आशा नहीं होती, भलाई के कुछ ऐसे बीज होते हैं जो तनिक सा प्रेम पाकर फूट पड़ते हैं।

ऐसा कोई भी लकड़ी का तख्ता न होगा—चाहे वह कितना भी सड़ा

गला क्यों न हो—जिसमें एक कुशल मिस्त्री कुछ रेशे ठीक अवस्था में न देख सके। एक फूहड़ कारीगर अज्ञान और घृणावश उसको फेंक देगा पर एक प्रवीण बढ़ई उसे उठाकर रख लेगा और जो हिस्सा सड़ गल चुका है उसे निकालकर बाकी को होशियारी से रंदा फेरकर साफ कर लेगा। वृक्षों की कठोर गांठें मूर्त्ति बनानेवाले कलाकार के बड़े काम आती हैं, क्योंकि उन्हीं में वह छोटे छोटे अत्यंत आकर्षक चित्र खोद सकता है।

*

गियाना प्रदेश का जलवायु योरुपवासियों के लिये बिलकुल विनाशकारी है। वहां दंडितों और निर्वासितों के लिये बंदीगृह बने हुए हैं। कई वर्षों की बात है, वहां एक बार एक प्रहरी अपनी देखरेख में कैदियों के एक गिरोह को केन नामक स्थान को ले जा रहा था। अचानक, तट के समीप ही, जब लहरें किनारे की ओर बढ़ रही थीं, वह पानी में गिर पड़ा।

उस बंदरगाह में लहरों के उतार के समय इतनी रेत भर जाती थी कि नौका को वहां खड़ा करना सर्वथा असंभव हो जाता था। इसके विपरीत ज्वार के समय पानी के तेज बहाव के साथ साथ शार्क मछलियां एक बड़ी संख्या में आकर सारे तट को घेर लेतीं।

पानी में गिरे हुए उस प्रहरी की अवस्था अत्यंत चिंताजनक हो उठी थी, क्योंकि तैरना भी उसको नाममात्र को ही आता था। और क्षण क्षण में यह भय बढ़ रहा था कि हिंसक जन्तु उसे निगल जायंगे। तभी किसी कोमल भावना से प्रेरित होकर एक कैदी पानी में कूद पड़ा।

वह उस प्रहरी को पकड़ने में सफल हो गया और यथेष्ट प्रयत्नों के बाद वह उसे बचा सका।

वह मनुष्य एक अपराधी था—ऐसा अपराधी कि जिसको कोई रास्ता चलता कैदी की पोशाक में, नंबर और निशानसहित, देख ले तो वह घृणा से मुंह फेर ले। उसका तो अपना अब कोई नाम ही नहीं रह गया था, वह नंबर ही उसका नाम था और जो अब एक कृपापूर्ण दृष्टि, एक दयापूर्ण शब्द का भी अधिकारी नहीं था। पर इस विचार को हम न्याययुक्त नहीं कह सकते क्योंकि उसके अंदर भी दया नाम की चीज का निवास था। सब दोषों के होते हुए भी उसका हृदय कोमल था। उसने अपनी जान भी खतरे में डाली तो किसके लिये ? उस मनुष्य के लिये जिसको अपने कर्तव्यपालन के हेतु उसके साथ निरंतर कठोरता का बर्ताव करना पड़ता था।

*

अपराधियों की एक और कहानी भी है। इससे हमें यह पता चलेगा कि यदि मनुष्यों के बाह्य स्वरूपों को देखकर हम अपना मत स्थिर करें तो कितना धोखा खा सकते हैं।

दो कैदी जेल से छूटने के बाद ओ-मारोनी नामक स्थान के कच्चे सोने के एक व्यापारी के यहां नौकर हो गये। व्यापारी इन्हें विश्वस्त मानकर वर्षों तक स्वर्ण-धूलि और स्वर्ण की डलियां इनको सौंपता रहा। वे ही उनको पास के स्वर्ण-बाजार में बेचने के लिये ले जाते। पर वह पास का बाजार भी इतना दूर था कि वहां पहुंचने में तीस दिन लग जाते। नदी के बहाव में नाव द्वारा जाना होता था।

एक दिन उन दोनों छूटे हुए कैदियों ने भागने का निश्चय किया। क्योंकि वहां कैदियों को अपना दण्ड भुगत लेने के बाद भी वापिस अपने घर जाने की स्वतंत्रता नहीं थी। उन्हें वहीं प्रायश्चित्त-गृहों में, कभी कभी तो सारा जीवन ही, रहना होता था। वह प्रदेश भी गियाना के समान बंजर और सूखा था, और कहीं कहीं इतना घना जंगल और दलदल-भूमि थी कि उन लोगों को सदा ही वहां भूख और ज्वर से मरने का डर लगा रहता था। उनमेंसे अधिकतर तो अवसर मिलते ही भाग खड़े होते थे।

व्यापारी के इन नौकरों ने भी अपने पास नाव पाकर उससे फायदा उठाना चाहा। अतएव परले किनारे पर स्थित हालैंड के किसी उप-निवेश में भाग जाने का उन्होंने निश्चय किया।

पर इससे पहले जितना भी स्वर्ण उनके स्वामी का उनके पास था उन्होंने उसे एक स्थान पर रख दिया और व्यापारी को पत्र लिखकर उस स्थान का पता बता दिया।

उन्होंने लिखा–"आपने हमपर सदा कृपा रखी है। सो भागते समय हम इतने कृतघ्न नहीं हो सकते कि उस धन से, जिसको आपने हमपर विश्वास करके हमें सौंपा है, आपको बंचित कर दें।"

स्मरण रहे, ये दोनों कैदी चोरी-डकैती के लिये दण्डित हुए थे। जो स्वर्ण उनके हाथ में था कितना भी थोड़ा क्यों न हो उनके काम आ सकता था। परंतु उनके अंदर कोई चीज सच्चीऔर खरी भी थी। उन लोगों के लिये, जो उनके पूर्व इतिहास को जानते थे और उसीके आधार पर अपना मत बनाते थे, वे कुकर्मी, चोर और डाकू थे; परंतु

उस व्यक्ति के लिये, जो उनपर विश्वास करना जानता था, सब दोषों के होते हुए भी वे विश्वासपात्र बन सकते थे।

नन्हे बच्चो, हमें अपने विचारों में उदार और दूरदर्शी होना चाहिये; अपने साथियों के बारे में कोई भी उतावला मत स्थिर कर लेने से हमें बचना चाहिये। सबसे अच्छा तो यह है कि यदि इसके बिना चल जाय तो कोई मत स्थिर ही नहीं करना चाहिये।



१०

व्यवस्था

प्राचीन काल के हिन्दू जगत् और उसकी रचना के बारे में एक विचित्र विचार रखते थे; और इस विचार का आशय था व्यवस्था का निरूपण करना।

जिस भूमि-खंड पर मनुष्य रहते थे उसका नाम था जम्बूद्वीप। उसके चारों ओर खारे पानी का सागर था। इसके चारों ओर पृथ्वी थी जो क्षीर-सागर से घिरी थी। फिर पृथ्वी और उसके चारों ओर नवनीत का सागर। उसके बाद पहले की तरह पृथ्वी और दधि-सागर—पृथ्वी और सुरा का सागर—फिर पृथ्वी और खांड का सागर—वही क्रम। सातवां और अंतिम सागर शुद्ध निर्मल जल का था। वह बहुत मीठा—सब सागरों से अधिक मीठा—था।

यदि तुम पृथ्वी का मानचित्र, जो आजकल स्कूलों में बरता जाता है, देखो तो तुम्हें न वहां खांड का सागर मिलेगा, न दूध का और न कोई और। ये हिन्दू भी यह नहीं मानते थे कि इन सागरों का सचमुच कोई अस्तित्व है। यह तो एक गहन विचार को समझने का एक मौलिक ढंग था।

यह प्राचीन कथा और और बातों के साथ साथ हमें यह भी बताती है कि संसार में सारा काम व्यवस्थित रूप में, एक क्रम से, होता है और

यदि इस पृथ्वी पर प्रत्येक वस्तु ठीक अपने स्थान पर न पाई जाती तो यह एक विश्रामदायक, उचित और निवासयोग्य जगह कभी न हो सकती। यदि नमक, दूध, मक्खन, सुरा, खांड, जल या कोई और बढ़िया पदार्थ पृथक् पृथक् किसी ढंग से न रखे होते, वरन् इसके विपरीत सब मिलाकर खिचड़ी बने होते, तो कैसे तुम उनका स्वाद ले सकते ?

*

मनुष्यजाति की सब धर्म-पुस्तकें, और विषयों में विभिन्न होती हुई भी, एक स्वर में व्यवस्था का पाठ पढ़ाती हैं।

यहूदियों की पुस्तक (Old Testament) के सृष्टयुत्पत्ति-प्रकरण में व्यवस्थासंबंधी अपने ढंग की एक कहानी है।

प्रारंभ में सब कुछ अस्तव्यस्त था, अर्थात् चारों ओर अव्यवस्था और अंधकार का साम्राज्य था। ईश्वर ने तब जो पहला काम किया वह यह कि इस अव्यवस्था के साम्राज्य के ऊपर प्रकाश फेंका, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई मनुष्य एक अंधेरी और मलिन गुफा में उतरते समय उसपर अपने लैम्प का प्रकाश डालता है।

उसके बाद—जैसा कि वहां लिखा है—दिन प्रतिदिन सब वस्तुएं क्रमानुसार उस अस्तव्यस्त साम्राज्य से निकलकर व्यवस्थित रूप में प्रकट होती गईं। अंत में मनुष्यजाति प्रकट हुई।

व्यवस्था का निर्माण करने और उसे सर्वत्र प्रकृति में खोज निकालने का यश मनुष्य को ही मिला है।

ज्योतिषविद् नक्षत्रों की ओर आंखें उठाये देखते रहते हैं और आकाश का मानचित्र बनाते हैं; वे नक्षत्रों के मार्ग का अध्ययन करते हैं, उन्हें

नाम देते हैं तथा सूर्य के चारों ओर ग्रहों के घूमने का हिसाब रखते हैं। उन्हें पहले ही पता चल जाता है कि किस समय चन्द्रमा पृथ्वी और आग के गोले सूर्य के बीच में आकर पृथ्वी की परछाईं ग्रहण करेगा अर्थात् चन्द्रग्रहण होगा। सारा ज्योतिष-विज्ञान ही व्यवस्था-ज्ञान के ऊपर निर्भर है।

गणितविद्या तो है ही व्यवस्था का ज्ञान। एक बहुत छोटा बालक भी ठीक क्रम में ही गिनती कहना पसंद करता है। उसे शीघ्र ही इस बात का ज्ञान हो जाता है कि एक, पांच, तीन, दस, दो कहने का कोई अर्थ नहीं, चाहे वह उंगलियों पर गिने या फिर कांच की गोलियों द्वारा। वह गिनेगा—एक, दो, तीन, चार; सारा गणितशास्त्र ही इसी क्रम में से निकलता है।

और, किसी क्रम और व्यवस्था के बिना, उस गानविद्या जैसी सुन्दर वस्तु का क्या रूप होगा? परदे में सात सुर हैं—सा, रे, ग, म, प, ध, नी! यदि तुम इन सुरों को एक के बाद एक बजाओ तो सब ठीक चलेगा, पर यदि तुम सबको एकबारगी ही दबाकर उनका एक सुर कर दो, तो वह क्या होगा, केवल एक विकट कोलाहल। मिलकर तो वे तभी एक सुरीला स्वर निकाल सकेंगे यदि उनमें किसी प्रकार का क्रम होगा। उदाहरणार्थ सा, ग, प, सा इकट्ठे बजकर एक ऐसा स्वर निकालते हैं जिसे हम 'पूर्ण स्वर' कहते हैं।

हम यह सिद्ध कर सकते हैं कि मनुष्यनिर्मित सब विज्ञानों और कलाओं का आधार व्यवस्था ही है।

*

पर व्यवस्था क्या सभी वस्तुओं में उतनी ही आवश्यक नहीं है ?

यदि तुम एक ऐसे घर में घुसो, जहां गृहस्थी का सब साज सामान, छोटी बड़ी चीज इधर उधर कोनों में बिखरी पड़ी है और उनके ऊपर धूल-मिट्टी की एक मोटी तह जम गई है, तो तुम एकदम चिल्ला पड़ोगे—"कैसा कुप्रबंध है, कैसी गंदगी है !" क्योंकि गंदगी और अव्यवस्था एक ही चीज है।

इस जगत् में धूल मिट्टी के लिये भी स्थान है, पर इनका स्थान इन चीजों पर नहीं है।

इसी तरह स्याही का स्थान दावात में है न कि उंगलियों या गलीचे पर।

सब काम ठीक तभी चलता है जब प्रत्येक वस्तु अपने स्थान पर हो।

व्यवस्था सीखने के लिये प्रारंभ में तो कुछ कष्ट उठाना ही पड़ता है, बिना परिश्रम के तो कुछ सीखा नहीं जाता। तैरना, नौका खेना, कुश्ती लड़ना—इनका सीखना कोई सरल नहीं होता। मनुष्य धीरे धीरे ही इन्हें सीख पाता है। कुछ समय के उपरान्त ही हम अपने कार्य नियमित ढंग से और कम से कम कष्ट के साथ करना सीख सकते हैं। और अंत में तो ऐसा हो जाता है कि अव्यवस्था हमें अरुचिकर और दुःखदायी प्रतीत होने लगती है।

जब तुम पहली बार चलना सीखे थे तो उसमें कई गलतियां थीं; तुम गिरे, तुम्हें चोट लगी और तुम रोये भी। अब तुम बिना इस तरफ ध्यान दिये चलते हो, निपुणता से दौड़ लेते हो। चलने और दौड़ने की तुम्हारी क्रिया भी तो व्यवस्था की एक बढ़िया मिसाल है; तुम्हारी

नसें, तुम्हारे पुट्ठे तथा तुम्हारे सब अंग एक नियमित ढंग से ही तो काम करते हैं।

इस तरह से व्यवस्थित ढंग से किया हुआ काम अंत में स्वभाव बन जाता है।

यह कभी मत सोचो कि नियमित ढंग से और ठीक समय पर काम करने से तुम प्रसन्न नहीं रह पाओगे, या हंस नहीं सकोगे। जब कोई अपना काम विधिपूर्वक करता है तो उसके लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह अपना मुंह गंभीर और उदास बना ले। इसलिये व्यवस्था-संबंधी इस लेख को हम एक मजेदार प्रसंग से समाप्त करना चाहेंगे।

समय-पालन का एक दृष्टांत सुनाती हूं, परंतु तुम उसका अनुकरण करने की कोशिश मत करना।

अरब देश की एक स्त्री के पास एक नौकर था। उसने उसको पड़ोस के घर से आग लाने के लिये भेजा। नौकर को रास्ते में मिश्र देश को जाता हुआ एक काफिला मिल गया। कुछ देर तो वह उनसे बातें करने में लगा रहा और अंत में उसने उन्हीं के साथ चल देने का निश्चय कर लिया। वह पूर्ण एक वर्ष वहां से अनुपस्थित रहा।

काफिले के साथ जब फिर वह वहां लौटा तो वह अपनी स्वामिनी की आज्ञानुसार पड़ोसी के घर में आग मांगने गया। जब वह जलते हुए कोयले ला रहा था तो उसको ठोकर लग गई और वह गिर पड़ा। साथ ही उसके हाथ से कोयले भी छूट पड़े और बुझ गये। तब वह चिल्ला पड़ा—

"उतावली कितनी बुरी चीज है!"

११

बनाना और तोड़ना

बालको, यह तो तुम जानते हो कि 'बनाने' और 'तोड़ने' के क्या अर्थ हैं।

एक सैनिक हाथ में शस्त्र लेकर तोड़ने अर्थात् किसी का नाश करने जाता है।

एक कारीगर नकशे बनाता है, नींवें खोदता है और फिर मनुष्यों के परिश्रमी हाथ किसान के लिये झोंपड़ा या राजा के लिये महल खड़ा कर देते हैं।

तोड़ने से बनाना अच्छा है पर कभी कभी तोड़ना भी आवश्यक हो जाता है।

बच्चो, तुम्हारी तो बाहुएं और हाथ खूब बलिष्ठ हैं; क्या तुम केवल निर्माण ही करोगे? कभी तोड़ोगे नहीं? और यदि कभी ऐसा किया तो किसको तोड़ोगे, किसका नाश करोगे?

दक्षिण भारत के हिन्दुओं की एक प्राचीन कथा है।

एक नवजात शिशु एक बार वृक्षों के एक झुरमुट में पड़ा पाया गया। तुम यह सोच सकते हो कि वह वहां पड़ा पड़ा मर गया होगा, क्योंकि उसकी मां उसे वहां छोड़ गई थी और उसको वापिस ले जाने का उसका कोई विचार नहीं था। जानते हो क्या हुआ? जिस वृक्ष के नीचे

वह पड़ा था, वह ह्यूपैइल नाम का एक विशेष प्रकार का वृक्ष था। उसके सुन्दर फूलों से मधु के समान मीठी बूंदें टप टप उसके मुंह में गिरती रहीं और इस प्रकार उसका पालन होता रहा। अंत में एक स्त्री ने उसे देखा—वह पास के शिवमंदिर में पूजा करने के निमित्त आई थी। उसका हृदय बच्चे को देखकर द्रवित हो उठा। उसे गोद में लेकर वह घर आ गई। क्योंकि उसके अपना कोई बाल-बच्चा नहीं था, उसके पति ने प्रसन्न हृदय से बच्चे का स्वागत किया।

दोनों उस कुंज में पड़े पाये गये अज्ञातकुलशील बालक का पालन पोषण करने लगे। प्रारंभ से ही उनके पड़ोसी उनपर व्यंग्य करने लगे थे कि न जाने किस जाति के बच्चे को ये लोग उठा लाये हैं। इस डर से कि उनके पड़ोसी इस बच्चे की खातिर उनसे नाराज न हो जायं उन्होंने उसे एक पालने में डाल दिया और पालने को घुड़साल की छत से लटका दिया। वहां परिया जाति का एक कुटुम्ब रहता था। बच्चे की रक्षा का भार उसको सौंप दिया गया।

कुछ वर्ष बाद लड़का बड़ा हुआ। आयु के साथ साथ उसकी मानसिक शक्तियों की भी वृद्धि हुई। अब उसने अपने पालनकर्ताओं से विदा ली और अकेला यात्रा के लिये निकल पड़ा। कुछ समय तक चल चुकने के बाद वह एक ताड़ के वृक्ष के नीचे सुस्ताने के लिये लेट गया। पेड़ ने उसकी धूप से रक्षा की। ऐसा प्रतीत हुआ मानों वह पेड़ भी उसे उस स्त्री के समान ही प्यार करता था जो उसे वृक्षों के झुरमुट में से उठा लाई थी। यह लगता तो असंभव है कि ताड़ का पेड़ जिसका तना इतना लंबा होता है किसी को अपने पत्तों से सारा दिन छाया दे सके, पर कहानी

यही कहती है कि सारा समय उसकी छाया निश्चल रही और जब तक वह लड़का सोता रहा उसे ठंडक पहुंचाती रही।

यह सब क्यों और कैसे हुआ ?

जन्म से ही बच्चे की इस सुरक्षा का क्या कारण था ? और ताड़ के पेड़ ने ही धूप से उसका बचाव क्यों किया ? क्योंकि उसका जीवन मूल्यवान् था। उस बच्चे ने एक दिन तिरुवल्लुवर नामक प्रसिद्ध तामिल कवि--'कुरल' की बारह कविताओं का रचयिता--बनना था।

उन वस्तुओं और उन व्यक्तियों की, जो संसार के लिये कुछ संदेश लाते हैं, रक्षा होनी ही चाहिये।

हमको बलिष्ठ बाहु पाकर प्रसन्न होना चाहिये क्योंकि इनकी शक्ति से हम रोग और मृत्यु से उन सबकी रक्षा कर सकते हैं जो सत्य, शिव और सुन्दर हैं।

इनकी रक्षा करने के लिये ही हमें कभी कभी लड़ना तथा नाश करना चाहिये।

*

तिरुवल्लुवर लोगों को अपने अमृतवचनों का आस्वादन ही नहीं कराते थे वरन् वे लड़ना और मारना भी जानते थे। उन्होंने कावेरी-पकम गांव के दैत्य को मारा था।

कावेरीपकम में एक किसान रहता था। उसके पास एक हजार पशु और गेहूं के कई विस्तृत खेत थे। पर इनके आस-पास एक दैत्य का बड़ा डर रहता था। खड़ी फसल को वह जड़ समेत उखाड़ देता; पशुओं और मनुष्यों की हत्या कर देता। कावेरीपकम के निवासियों

के हृदय इससे बहुत विक्षुब्ध हो उठे थे।

उस धनी किसान ने घोषणा की—"जो वीर हमें इस दैत्य के अत्याचार से मुक्त कर देगा उसे मैं एक मकान, खेत तथा बहुत सा धन दूंगा।"

बहुत समय तक कोई वीर आगे नहीं बढ़ा। किसान तब पर्वत पर रहनेवाले मुनियों के पास गया और राक्षस के मारनेवाले का पता पूछा।

पर्वतवासी मुनि बोले—"तिरुवल्लुवर के पास जाओ।"

इस प्रकार वह किसान तिरुवल्लुवर के पास आया और उनसे सहायता के लिये प्रार्थना की। उन्होंने कुछ राख अपनी हथेली पर ली और उसपर पांच पवित्र अक्षर लिखे। फिर मंत्र पढ़कर वह राख ऊपर हवा में फेंक दी। उन अक्षरों और मंत्रों का उस दैत्य पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह मर गया। कावेरीपकम के लोग इससे बहुत प्रसन्न हुए।

कुछ वर्ष पीछे की बात है। एक बार तिरुवल्लुवर मदुरा शहर में गये। बहुत से लोग उनकी सुन्दर कविता को सुनने के लिये एकत्र हुए। वृक्षों के कुंज में पाये गये बच्चे द्वारा रचित पदों को सुनकर वे मुग्ध हो गये—

"भला बनने से बढ़कर और कोई वस्तु इस संसार में मिलनी अत्यंत कठिन है।"

वहां पास ही खिले कमलोंवाले एक तालाब के किनारे बेंच पर विद्वान् कवियों की एक टोली बैठी थी। ये लोग एक नीच जातिवाले कवि को बेंच पर अपने साथ स्थान नहीं देना चाहते थे। वे प्रश्न पर

प्रश्न कर उन्हें भ्रम में डाल उनकी भूलें पकड़ने की कोशिश कर रहे थे। अंत में उन्होंने तिरुवल्लुवर से कहा–"ओ परिया, अपनी कविता की पुस्तक को तू इस बैंच पर रख दे। यदि यह सचमुच ही सुन्दर साहित्यिक कृति हुई तो यह बैंच 'कुरल' के अतिरिक्त और किसी को अपने ऊपर स्थान नहीं देगी।"

तिरुवल्लुवर ने अपनी पुस्तक पानी के समीपवाली उस बैंच पर रख दी। कहानी आगे कहती है कि पुस्तक का उसपर रखा जाना था कि वह बैंच इतनी छोटी हो गई कि उसपर केवल पुस्तक को ही स्थान मिल सका और मदुरा के वे अभिमानी और ईर्षालु कवि दूसरी ओर तालाब के जल में गिर पड़े। हां, वे उनचास जलनखोर तालाब में कमलों के मध्य में जा पड़े। लज्जित मुख, भीगे शरीर लिये वे बाहर निकले। उस दिन से तामिलभाषाभाषी 'कुरल' से बड़ा प्रेम करने लगे हैं।

★

बच्चो, कावेरीपकम के राक्षस का मारा जाना क्या तुम्हें अच्छा नहीं लगा? मदुरा के वे उनचास शरारती कवि जो पानी में गिर पड़े थे क्या इससे तुमको दुःख हुआ है?

इस संसार में भली वस्तुएं भी हैं और बुरी भी। हमें भली से तो प्रेम करना चाहिये, उनकी रक्षा करनी चाहिये और बुरी से लड़ना तथा उनका नाश करना चाहिये।

इस भले कवि की तरह सभी बुद्धिमान् लोग ऐसा करना जानते हैं और कर भी सकते हैं। जितने अधिक बुद्धिमान् वे होंगे उतना ही इस

कार्य को वे अच्छी तरह कर सकेंगे। छोटे बच्चे, जिनकी बुद्धि अभी उतनी विकसित नहीं हुई है और जो उतना बल भी नहीं रखते, उनकी नकल करके अपने साहस का प्रयोग कर सकते हैं।

तिरुवल्लुवर की बहन आवे ने अपने भाई की इसी प्रकार की नकल की थी।

एक दिन वह उराइयूर गांव की एक छोटी गली में जमीन पर बैठी थी। वहां से तीन व्यक्ति घूमते हुए निकले। एक राजा था और दो कवि। जब राजा आया तो उसने एक घुटना टेक उसके प्रति अपना सम्मान प्रदर्शित किया। अब कवि गुजरा। इसके सम्मानार्थ उसने अपना दूसरा घुटना झुकाया। पर जब दूसरा कवि उसके समीप पहुंचा तो उसने अपनी दोनों टांगें फैलाकर रास्ता ही रोक लिया।

उसके बर्ताव का यह ढंग अनुचित सा तो लगा। पर आवे अपने उत्तरदायित्व को भली भांति समझती थी। वास्तव में दूसरा कवि एक ढोंगी मनुष्य था। उसमें प्रतिभा तो कुछ थी नहीं, वह कोरा प्रदर्शन ही करता था।

कवि को इससे बड़ी खीज हुई और उसने आवे से उसके इस बर्ताव का कारण पूछा।

"एक ऐसे पद की रचना करो जिसमें 'मन' शब्द तीन बार आवे", —आवे ने उत्तर दिया।

यह देखकर कि वहां बहुत से लोग इकट्ठे हो गये हैं, कवि ने अपनी विद्वत्ता दिखाने का अच्छा अवसर पाया। उसने बहुतेरा प्रयत्न किया पर दो बार से अधिक वह किसी प्रकार भी उस शब्द को अपनी कविता

में न ला सका।

आवे ने व्यंग्य किया—"उस तीसरे शब्द का क्या हुआ जिसने तुम्हें यहीं रोक दिया और जिसे तुम्हारी कविता में भी स्थान नहीं मिला?" इस प्रकार उसने उस ढोंगी को लज्जित किया।

क्या तुम यह सोचते हो कि आवे ने अपने इस अशिष्ट व्यवहार में प्रसन्नता अनुभव की थी? नहीं, तनिक भी नहीं। पर ढोंग उसको सम्मानयोग्य प्रतीत नहीं हुआ। वह इस बात की विवेचना कर सकती थी कि किसका आदर होना चाहिये और किसका नहीं। वह कहती थी—"श्रेष्ठ पुरुष, उस हंस की तरह जो सदा खिले-कमलयुक्त झील की ही ओर जाता है, सदा भली वस्तु की ओर झुकता है। पर दुष्टप्रकृति लोग सदा बुराई की ही खोज करते हैं—जैसे गिद्ध दुर्गंध द्वारा आकर्षित होकर सड़े गले जानवरों को जा पकड़ता है।"

संसार के सब देशों के बालको, वे कौन सी बुरी वस्तुएं हैं जिनके विरुद्ध तुम्हें लड़ाई करनी सीखनी चाहिये? किन वस्तुओं का तुम्हें नाश करना चाहिये? किन वस्तुओं पर तुम्हें अधिकार स्थापित कर लेना चाहिये? उन सब वस्तुओं पर जो मनुष्य के जीवन या उसकी उन्नति के लिये हानिकारक हैं, जो उसे अधोगति या दुःख की ओर ले जाती हैं।

वेगवती नदियों के ऊपर पुल और बाढ़ को रोकने के लिये बांध बनाकर मनुष्य को पानी के दुर्दाम वेग को अधीन करना चाहिये।

उसे ऐसे मजबूत जहाज बनाने चाहियें जो हवा और लहरों की प्रचंडता का सामना कर सकें।

बनाना और तोड़ना

दलदलवाली भूमि के घातक कीचड़-पानी को निकालना या सुखा देना चाहिये और इस प्रकार उसकी सील में जो ज्वररूपी दैत्य रहता है उसका नाश कर देना चाहिये।

जंगली जानवरों से, हर स्थान पर या जहां उनका अधिक डर हो: लड़ाई ठानकर उनका नाश कर देना चाहिये।

ऐसे होशियार डाक्टर पैदा होने चाहियें जो सब जगह से दुःख-दर्द और बीमारी को भगा दें।

मनुष्य को भूख के सबसे बड़े कारण गरीबी को जीतने का प्रयत्न करना चाहिये। यह भूख ही उन माताओं को रुलाती है जिनके बच्चों को रोटी तक नसीब नहीं होती।

सबके जीवन को दुःखमय बनानेवाली दुष्टता, ईर्षा और अन्याय का उसे नाश करना चाहिये।

*

इसके विपरीत वे कौन सी वस्तुएं हैं जिनके साथ मनुष्य को प्रेम करना चाहिये, जिनकी रक्षा की जानी चाहियें?

इस संसार में आनेवाले प्रत्येक बच्चे के अमूल्य जीवन की रक्षा होनी चाहिये।

उसे लाभकारी वृक्षों की रक्षा करनी चाहिये। ऐसे फूल और पौदे लगाने चाहियें जो उसे आहार और आनंद प्रदान करते हैं।

उसको ऐसे मकान बनाने चाहियें जो मजबूत, स्वास्थ्यप्रद और खुले हों।

पवित्र देवालयों, मूर्त्तियों, चित्रों, बर्तनों, कसीदे के कामों, सुमधुर

गीतों और ललित कविताओं की बड़ी सावधानी से रक्षा की जानी चाहिये। संक्षेप में उन सब चीजों की रक्षा की जानी चाहिये जो सुन्दर होने के कारण मनुष्य के आनंद की वृद्धि करती हैं।

भारतवर्ष और दूसरे देशों के बच्चो, सबसे बड़ी बात तो यह है कि मनुष्य को उन हृदयों की रक्षा करनी चाहिये जो प्रेम करते हैं, उस बुद्धि की रक्षा करनी चाहिये जो सत्य चिंतन कर सकती है, उन हाथों की रक्षा करनी चाहिये जो सच्चे और न्याययुक्त काम करते हैं।

